चन्दामामा
अगस्त १९८८

मैगी क्लब में आओ – हर पल मौज मनाओ

मैगी क्लब का सदस्य बनने के लिए मैगी नूडल्स के 5 खाली पैकेटों के सामने वाले हिस्से से डिज़ाइन में छपे नाम 'Maggi 2- Minute Noodles' काटो और हमें भेज दो। तुम्हें आजीवन सदस्य बनाने के लिए हम तुम्हें एक सुन्दर मैगी क्लब सदस्यता बैज और सर्टिफ़िकेट भेजेंगे। साथ में नीचे लिखे उपहारों में से तुम्हारा मनपसंद कोई भी एक उपहार भी।

● मैगी स्कूल फ़न सैट (20 बुक लेबल और एक टाइम-टेबल) ● मैगी ट्रैफ़िक गेम ● चाइनीज़ चित्र-पहेली ● मैगी पोस्टर सेट ● डिज़्नी टुडे कॉमिक (हर बार नया अंक)

अगर चाहो तो पाँचों उपहार एक साथ ले सकते हो। लेकिन ध्यान रहे, हर उपहार के लिए 5 पैकेटों से 'Maggi 2-Minute Noodles' काटकर भेजना ज़रूरी है।

सिर्फ़ इतना ही नहीं! मैगी क्लब में हम समय-समय पर तुम्हारे लिए कई रोचक चीज़ें पेश करते रहेंगे। इसलिए जल्दी करो और आज ही मैगी क्लब में शामिल हो जाओ।
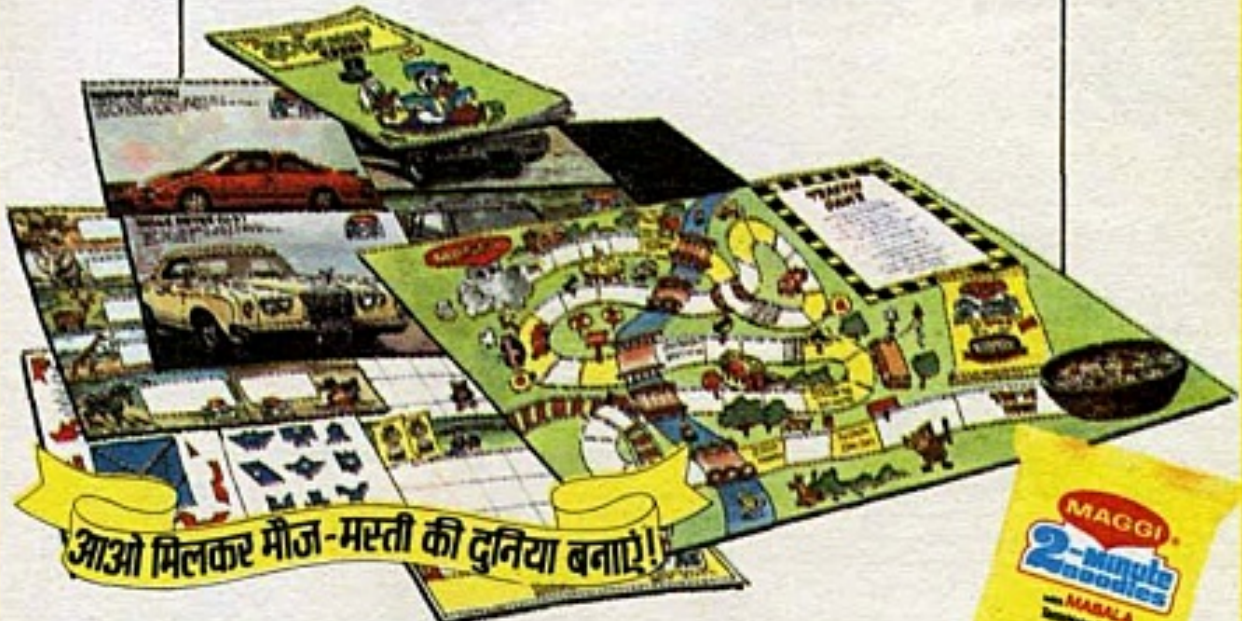
याद रखो:

कटे हुए नामों को 60 पैसे के टिकट वाले लिफ़ाफ़े में डालकर एक कागज़ पर नीचे दिए विवरण के साथ हमें भेज दो :

नाम, पूरा पता, उम्र लड़का/लड़की,

कितने कटे हुए नाम भेजे हैं: कौन सा उपहार चाहिए:

अपना पत्र इस पते पर भेजो:

मैगी क्लब, पोस्ट बॉक्स नं. 5788, नई दिल्ली-110 055

MAGGI
2-minute noodles

HTA 6026HIN

दोस्तीभरी पट्टियाँ खोज निकालो!
इस चित्र में 35 हैण्डीप्लास्ट पट्टियाँ
और 10 गोल पट्टियाँ है. इन सब को
खोज सकते हो तुम?
इसके बाद इनमें रंग भरो और
देखो कितना सुंदर चित्र बनाया है तुमने.
दोस्तीभरी पट्टी!
Handyplast®
medicated strips
HTA 2044
अपने और अपने दोस्तों के लिए काट कर रख लो.

"Hey... Geometry can be fun!"
SO EASY — SO INTERESTING —
LION
with
LION
THE PERFECT INSTRUMENT BOX FOR STUDENTS
Suddenly, Geometry is no longer a drab subject... it becomes really exciting when the student has a set of finely crafted instruments to work with. Draw perfect circles, rectangles of perfect length and width and squares with perfect right angles. With the LION Instrument, there is no margin for error.
LION
LION
LION
LION
Marketed by:
LION MARKETING PVT. LTD
95 Parijat Marine Drive, Bombay 400 002.
LION Instrument Box — It's the king of all.
National-103
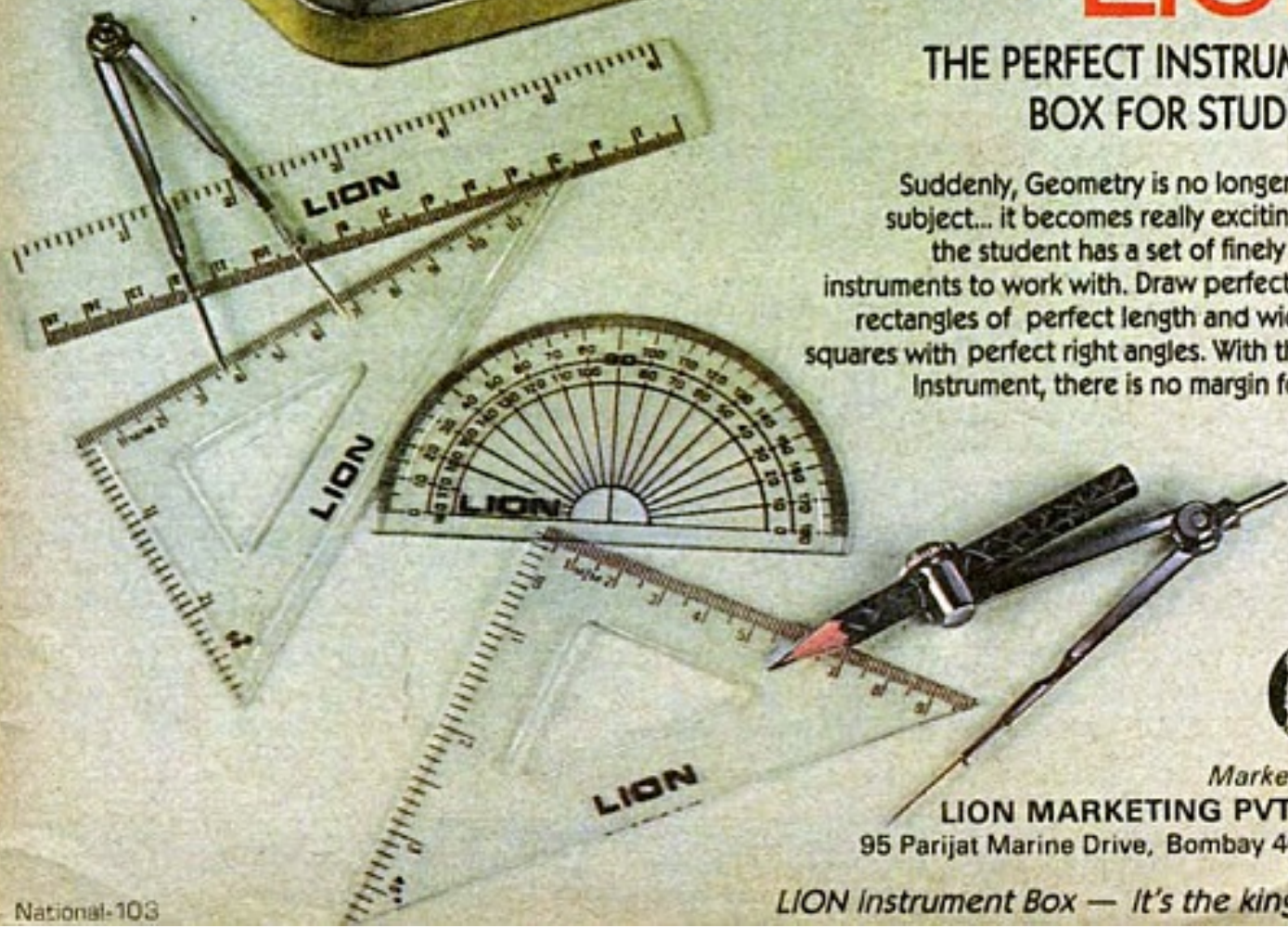
चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

समाज में अपने स्थान को पहचान कर उसके अनुरूप व्यवहार करना सब के लिये संभव नहीं होता। क्योंकि, कुछ लोग वास्तविक स्थिति को समझ नहीं पाते। कुछ लोग कल्पना तथा यथार्थ जगत् के बीच अंतर को ठीक-ठीक समझ नहीं पाते कल्पना-जगत् को ही वे यथार्थ समझते है। ऐसी स्थिति में उसका परिणाम क्या होता है-"दूर के पहाड़" कहानी से हमें विदित होता है।

अमर वाणी

यद्यदा चरति श्रेष्ठः, तत्तदेवेतरो जनः।
सयत् प्रमाणं कुरुते, लोकस्तदनुवर्तते ॥

[महान् लोगों के कार्यों का ही साधारण जन अनुसरण करते हैं। महान् लोगों द्वारा स्वीकृत प्रमाणों का अनुसरण करके ही यह विश्व चलता है।]

वर्ष : ४०   अगस्त १९८८   अंक : १२

एक प्रति : २-५०   ::   वार्षिक चन्दा : ३०-००

Lakhani

Study time.... Play time.... Any time....

Lakhani Canvas Shoes

For comfort, easy wear and long-lasting quality.

We think quality... we make quality... you get quality.

Lakhani

हित-अहित

एक बार सुधर्म नामक राजा के पास उसके सिपाही एक युवक को ले आये। यह एक परदेशी था। सिपाही उसको इस आरोप में बन्दी बनाकर लाये थे कि, उसने राहगीरों को लूटकर एक आदमी की हत्या भी की है। राजा ने सुनवाई करके उसको मौत की सज़ा सुनायी।

सिपाही उसको वहाँ से खींच ले जाने लगे, तो वह कुछ अंट संट बकने लगा। उसकी भाषा राजा के समझ में न आयी; इसलिए उसने मंत्री से उस युवक की बोली का अर्थ पूछा।

मंत्री ने कहा, "प्रभु, यह युवक आपकी न्यायप्रियता की प्रशंसा कर रहा है।"

राजा मुस्कुराकर बोला, "ओह, ऐसी बात है? तब तो उसकी मौत की सज़ा रद कर के 'एक वर्ष के लिए कारावास' ऐसी बना दें।"

तत्काल सभासद उठकर बोला, "महाराज, यह आप की प्रशंसा नहीं कर रहा है, बल्कि आपकी निन्दा कर रहा है। मैं उसकी भाषा जानता हूँ।"

सभासद की बातें सुनकर राजा पलभर मौन रहे; फिर बोले, "मंत्री ने जो झूठ कहा, उसके कारण एक आदमी की जान बची। मगर इस वक्त तुम ने जो सच कहा, वह एक आदमी की जान की बलि चाहता है। अहित करनेवाले सच की अपेक्षा हित चाहनेवाला झूट ज़्यादा श्रेष्ठ होता है।" यह कह कर सिपाहियों की ओर मुड़कर राजा ने कहा, "इस आदमी को कारागार में बन्दी बना दो। यही सज़ा इसके लिये पर्याप्त है।"

राजा का निर्णय सुनकर सभासदों ने प्रसन्नता से हर्षनाद किया।

दूर के पहाड़

महीधर माणिक्यपुर का ज़मीन्दार था। एक दक्ष व्यक्ति होते हुए वह बड़ा रूपसंपन्न भी था। उस की ज़मीन्दारी का कारोबार बहुत बड़ा था। एक दिन वह साधारण किसान के-से कपड़े पहन कर अपने दिवान के साथ ज़मीन्दारी के कुछ ग्रामों का भ्रमण करने निकला।

एक गाँव से कुछ दूरी पर उसने एक आदमी देखा। वह पेड़ पर फाँसी का फंदा कस रहा था। ज़मीन्दार ने उस के पास जाकर मुसकुराते हुए पूछा—"भाई, पेड़ की शाखा पर तुम यह जो फाँसी का फँदा बांध रहे हो, वह तुम्हारे अपने लिए है या किसी और के लिए? बता सकेंगे?"

फंदा बांधनेवाले आदमी ने कहा—"इस दुनिया में मुझ से बढ़कर और कोई बदक़िस्मत व्यक्ति हो, तब न फाँसी लगाकर मरने को तैयार हो जावे?"

"ठीक है, पर यह बता सकोगे कि तुम पर ऐसी कौन बड़ी मुसीबत आन टपकी है?" ज़मीन्दार ने जिज्ञासावश पूछा।

"मुसीबत? क्या बताऊँ जी, मैं जैसी मुसीबत में फँसा हूँ, उस से इस फंदे को छोड़कर ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी मुझे बचा नहीं सकते। मेरा नाम है सीतापति। बचपन से ही मुझे एक लड़की से प्यार है। उसका नाम है जलजाक्षी। मैं उस के साथ शादी करना चाहता हूँ ज़रूर, पर वह मुझ से नफ़रत करती है और इस माणिक्यपुर के ज़मीन्दार को चाहती है। जलजाक्षी के पिता ने उसे लाख समझाया, पर वह टस से मस नहीं हो रही है। इस लिए मैं जीवन में अत्यन्त निराश होकर प्राणों को त्यागना चाहता हूँ। सो इस फंदे को अपने लिए बाँध रहा हूँ। समझ गये मेरी मुसीबत?" उस युवक ने सारी बात खुले शब्दों में समझा दी।

ज़मीन्दार ने आश्चर्य के साथ कहा—"शायद जलजाक्षी को मति-भ्रम हुआ होगा। किसी अच्छे

शकुन्तला दवलीकर

वैद्य के पास जाकर ठीक निदान कर लो ।"

"जलजाक्षी का बुद्धि-भ्रम वैद्य की दवाइयों से दूर होना संभव नहीं लगता । ज़मीन्दार के साहस-पराक्रम, तथा रूप-गुणों के क़िस्से उसने बचपन ही से सुन रखे हैं । इसलिए ज़मीन्दार से विवाह करने का उस का दृढ़ निश्चय है ।" सीतापति ने व्यथित अंतःकरण से कहा ।

ज़मीन्दार ने थोडी देर तक कुछ विचार किया, फिर बोला—"देखो दोस्त, ज़मीन्दार साहब मेरे मित्र हैं । मैं उन को समझाकर कहूँ, तो वे जलजाक्षी के साथ तुम्हारा विवाह खुशी से करवा देंगे । तुम निश्चिन्त हो जाओ । खुदकुशी का विचार छोड़ दो ।" यों समझाकर उसने सीतापति को अपने घर भेज दिया ।

इसके बाद ज़मीन्दार ने दिवान से कहा-—"चलिए, अभी हम जलजाक्षी के गाँव जाकर उस से मिल लेंगे । देखेंगे वह क्या कहती है ।" फिर ज़मीन्दार और दिवान जलजाक्षी के घर के लिए चल पड़े ।

थोड़ी ही देर में दोनों जलजाक्षी के ग्राम में पहुँचे । एक गली के मोड़ पर देखा कि किसी मकान के सामने लोगों की भारी भीड़ लगी है । वहाँ पहुँचकर ज़मीन्दार ने भीड़ में से एक से सवाल किया—"यहाँ पर इतनी भीड़ भला क्यों लगी है ?"

भीड़ में से एक आदमी ने कहा—"इस मकान के मालिक की लड़की ज़मीन्दार से शादी करना चाहती है । पिता ने उसे खूब समझाया— "बेटा, तुम्हें ज़मीन्दार के दर्शन भी मैं नहीं करा सकूँगा! शादी की तो बात ही क्या!" लड़की दुख

में व्याकुल हो कुएँ में कूदनेको तैयार हुई। ठीक वक्त पर सब ने घर में प्रवेश कर उस के प्राण बचाये। वरना वह खुदकुशी कर ली होती।"

यह समाचार पाकर दिवान के मन में उस लड़की के प्रति बड़ी सहानुभूति पैदा हुई। उस ने ज़मीन्दार से पूछा—"महाराज, यह बेचारी आप को पाने के लिए अपनी जान न्योछावर करने को तैयार हैं! आप उसका उद्धार नहीं करना चाहेंगे?"

घबड़ाकर ज़मीन्दार ने कहा—"मुझे एक ही पत्नी पर्याप्त है। कृपा करने ऐसी सलाह मुझे मत देना। कुछ ऐसा उपाय बताइए, जिस से सीतापति के साथ विवाह करने जलजाक्षी तैयार हो जाए।"

ज़मीन्दार और दिवान दोनों वहाँ से चल पड़े। रास्ते में दोनों ने आपस में विचार-विमर्श किया और आख़िर एक उपाय ढूँढ निकाला।

एक हफ़्ते बाद दो दूत जलजाक्षी के घर पहुँचे और निवेदन किया—"ज़मीन्दार शिकार खेलने जंगल गये थे, उनके पैर में गहरी चोट आई है। वैद्य ने उनकी बारीकी से जाँच करके सलाह दी है कि ज़मीन्दार को पूर्णतः विश्राम करना चाहिए। ज़रा भी हाल-चाल न करे तभी उनका घाव भर सकता है। वरना बहुत तकलीफ़ हो सकती है। इस लिए हम उन को किसी ऐसे मकान में ठहराना चाहते हैं, जो पर्याप्त विशाल और सुविधापूर्ण हो। हम सोचते हैं कि आप का मकान उनके लिए सर्वथा योग्य होगा। अगर आप लोगों को इस में आपत्ति न हो तो आप मदद कर सकते हैं।"

यह समाचार पाकर जलजाक्षी फूला न समायी। झट बोल उठी—"ज़मीन्दार साहब को

जल्दी के आइए । जाने घाव से कैसे परेशान होंगे!"

कुछ देर बाद घोड़े पर सवार हो ज़मीन्दार चार सेवकों के साथ वहाँ आ पहुँचा और उसके लिए कायम किये गये कमरे में ठहर गया। आँखों में आँसू लाकर जलजाक्षी बोली—"आप को यों परेशान देख कर मुझे ऐसा लगता है कि मैं नरक की यातनाएँ भोग रही हूँ ।"

उस दिन रात भर जागकर जलजाक्षी ने ज़मीन्दार की परिचर्या की ।

दूसरे दिन शाम को ज़मीन्दार के नौकर दिवान के साथ बड़े-बड़े पात्रों में शराब ले आये । जलजाक्षी ने जिज्ञासा के साथ ज़मीन्दार से पूछा—"इन पात्रों में क्या पेय है भला ?"

"मन को तसल्ली देनेवाला अमृत है-शराब । अगर मैं शराब न पीऊँ तो मुझे रात भर नींद न आएगी, जागना ही होगा । तब बड़ी परेशानी होगी । समझी?" ज़मीन्दार ने जलजाक्षी को समझाया ।

जलजाक्षी का चेहरा कुछ ऐसा हो गया, जैसे इसे घृणा पैदा हो गयी हो । फिर भी चुपचाप वह घर के पीछे की ओर चली गयी ।

शाम को ज़मीन्दार के कुछ ऐयाशी दोस्त हाज़िर हुए । सभी क़ीमती वस्त्र पहने हुए थे । ज़मीन्दार के साथ पाँसे खेलते हुए उन लोगों ने सारी रात काटी । पाँसे के खेल में ज़मींदार ने अपना सारा धन खोया ।

सभी दोस्त ज़मीन्दार से जीते धन के साथ चल दिये । तब दिवान ने व्यथित अंतःकरण से पूछा—"हुज़ूर, आप हद से ज़्यादा शराब पीकर अपने स्वास्थ्य को खो बैठेंगे और पाँसे खेलकर धन को । आपकी यह हालत देखकर मुझे बहुत दुख होता है । अगर यों ही चलता रहा तो आपकी सेहत और ज़मीन्दारी कब तक टिकी रह सकती है?"

स्वास्थ्य और ज़मीन्दारी जितने दिन टिकनी है, टिके! मुझ जैसे ज़मीन्दार के लिए मनोरंजन ही सब से अधिक महत्वपूर्ण है । हाँ, एक बात सुनो, जिसे कहना मैं भूल गया—पाँसे के खेल में बड़ी रक़म खोकर मैं कर्ज़दार बन गया । अब मुझे धन चाहिए । पहले हम ने भैरव पहाड़ों के पीछेवाले गाँवों में से चार गाँव बेच डाले थे । अब दस

और गाँव बेचकर धन लेते आओ। मुझे धन चाहिए दिवानजी!" ज़मीन्दार ने व्याकुल होकर कहा।

इसके बाद वह ज़ोर से कराहता हुआ छाती पर हाथ रखकर एकदम लुढ़ककर गिर पड़ा। नौकर दौड़कर वैद्य को बुला लाये।

वैद्य ने ज़मीन्दार को कोई काढ़ा पिलवा दिया और नेक नसीहत दी—"जी महाराज, आपका स्वास्थ्य पूरी तरह बिगड़ चुका है। आप का लंबा इलाज करना होगा। इस अवधि में आप अपना महल छोड़कर बाहर नहीं जा सकते।"

ज़मीन्दार के अपने महल लौटने की तैयारियाँ हुईं। वहाँ से निकलते समय ज़मीन्दार पिछवाड़े में कुएँ के पास खड़ी जलजाक्षी के पास पहुँचा और पूछा—"जलजाक्षी, तुम्हारे सौंदर्य और तुम्हारी अनुपम सेवा से मुझे अत्यन्त संतोष हुआ अपने महल में पहुँचने के बाद यथोचित प्रबंध करके मैं तुम्हारे पास ख़बर भेज दूँगा। मेरे साथ शादी करने में तुम्हें कोई एतराज तो नहीं है न?"

उत्तर देते हुए जलजाक्षी ने कहा—"प्रभु, मुझे क्षमा कीजिए। यह बात सच है कि मैं एक समय आप से विवाह करने को बहुत लालायित थी। अब मैं वह नहीं चाहती। इस समय आप के प्रति मेरे मन में अत्यन्त घृणा है। आप का असली रूप मैं जान गयी। स्त्री एक आदर्श पति की कामना करती है, आप के समान अनेक प्रकार के दुर्व्यसनों के शिकार हुए पति की नहीं। आप एक बहुत बड़े ज़मीन्दार है अवश्य, पर कई मामलों में सीतापति आप से उत्तम मानव है। पिछले दो दिनों में जो कुछ हुआ, उस से मैंने भली भाँति जान लिया कि दूर के पहाड़ सुहावने होते हैं।"

इस घटना के कुछ दिनों बाद सीतापति के साथ जलजाक्षी का विवाह संपन्न हुआ।

सीतापति के मन के सारे दुख नष्ट हो गये। नये हौसले के साथ सीतापति ज़िंदगी बिताने लगा। जलजाक्षी और सीतापति का जोड़ा यथाशक्ति समाज-सेवा करता हुआ आदर्शरूप बन गया। सभी उनकी भूरी भूरी प्रशंसा करते।

बोझ का पुरस्कार

वेदवती नगरी का निवासी श्याम शास्त्री एक विख्यात पंडित था । उसके पास अनेक प्राचीन ग्रंथ थे । जाति, वर्ण, धर्म आदि अनेक भेद-भावों के कारण संसार में नित्य-प्रति अनेक अत्याचार, खूनख़राबी व हत्याएँ होते देख श्याम शास्त्री बहुत दुखी हुआ । उसने अन्य धर्मों से संबंधित अनेक ग्रंथों को हासिल किया, और उनका भली भाँति अध्ययन किया । तब जाकर उसे एक अद्भुत सत्य का ज्ञान हुआ ।

वह सत्य यह कि कोई भी धर्म हिंसा का पाठ नहीं देता । सभी धर्म मानव मात्र की समानता का पाठ पढ़ाते हैं और विश्व के कल्याण की चेष्टा करते हैं ।

अब श्याम शास्त्री ने निश्चय किया कि वह स्थान स्थान पर व्याख्यान देकर इस सत्य का भरसक प्रचार और प्रसार करेगा । वह मानता था कि श्रोताओं की शंकाओं का समाधान उन उन धर्मावलंबियों के ग्रंथों से उदाहरण लेकर किया जाना चाहिए । इस निर्णय के अनुसार उसने अपना भ्रमण शुरू किया । इस आयोजन को सफल बनाने के हेतु श्याम शास्त्री ने अलग अलग धर्मों से संबंधित ग्रंथों को लकड़ी के एक बक्से में सजाया । वीरदास नामक एक सेवक को नियुक्त किया, जिसका काम था उस बक्से को ढोना । इतनी तैयारी के साथ श्याम शास्त्री देशाटन पर निकल पड़ा ।

शुरू शुरू में श्याम शास्त्री के व्याख्यानों पर किसी ने ध्यान नहीं दिया । पर जब कोई विशेष धर्मावलंबी अपनी शंका से साथ आता, तब उसी समय श्याम शास्त्री उसके धर्मग्रंथों को निकालकर अपने वक्तव्य संबंधी प्रमाण दिखाकर उस के संदेह का निवारण कर देता । श्याम शास्त्री की यह नई पद्धति धीरे-धीरे लोगों पर अपना प्रभाव जमाने लगी । फलस्वरूप उस प्रदेश के

कोने-कोने से श्याम शास्त्री को निमंत्रण आने लगे। अनेक सभाओं में श्याम शास्त्री द्वारा चलाए गए इस कार्यक्रम की भूरि भूरि प्रशंसा की गई। अनेक लोगों ने धन और वस्तुओं के रूप में शास्त्री जी को बहुतेरे पुरस्कार भी प्रदान किये।

इस प्रकार एक वर्ष बीत गया। एक बार एक ज़मीन्दार ने श्याम शास्त्री को एक लाख रूपये का पुरस्कार दिया। इस घटना के एक महीने बाद उस राज्य के राजा ने दो लाख रुपये का पुरस्कार देकर शास्त्री का भव्य सन्मान किया।

यों श्याम शास्त्री की न केवल माली हालत सुधरी, बल्कि उसका सुयश कई देशों में फैल गया। लेकिन श्याम शास्त्री के ग्रंथों से भरे बक्से को ढोनेवाले वीरदास का स्वास्थ्य दिन-ब-दिन बिगड़ता गया। कई दिन शास्त्री को उसकी बीमारी का पता न चला। मालूम होने पर उसने उसे एक निःशुल्क चिकित्सा-गृह में भर्ती कराया। वहाँ पर वैद्यों ने उसकी पूरी जाँच पड़ताल की और निदान किया कि वीरदास शारीरिक दृष्टि में पूर्ण स्वस्थ है। उसे कोई बीमारी नहीं है, हाँ वह दुबला ज़रूर हो गया है।

तब श्याम शास्त्री ने आश्चर्य के साथ वीरदास से पूछा—"भाई वीरदास, तुम्हारी बीमारी मानसिक है। तुम अपने मन की व्यथा खुल्लम खुल्ला कह क्यों नहीं देते? साफ बताओ, क्या बात है?"

अपने मन की बात ज़ाहिर करने में वीरदास को संकोच रहा, फिर जब बार-बार पूछा गया तो उसने अपनी व्यथा शास्त्री के सामने रखी—"शास्त्रीजी, मैं आप के धार्मिक ग्रंथों का सारा

बोझ ढोना हूँ, पर संपत्ति और यश आपको प्राप्त होते हैं ?"

श्याम शास्त्री को अब तक इस बात की कल्पना तक न थी कि वीरदास के मन में ऐसी गहरी व्यथा छिपी है । उसे आश्चर्य हुआ, सरल भाव के साथ उसने वीरदास से पूछा-"भाई, मैं मानता हूँ, तुम ग्रंथों से भरा बक्सा गाड़ी में रख देते हो और वहाँ से मंच तक पहुँचा देते हो । ठीक हिसाब करके देखो कि तुम दिन में दो घटों से ज़्यादा तो बोझ नहीं ढोते हो । मैं कह रहा हूँ, यह बात ठीक है न?"

"बात तो सही है, पर आप जिस नई पद्धति से प्रचार कर रहे हैं, उसके लिए बोझ तो मैं ही ढोता हूँ, इसी से आपको यश और धन प्राप्त होता है न?" वीरदास ने अपने मन की बात स्पष्ट की ।

"हाँ, हाँ! तुम रोज़ दो घंटे मेरे ग्रंथों का बोझ ढोते हो अवश्य । बोझ ढोते समय तुम को तक़लीफ़ महसूस हुई, तो बोझ को नीचे उतार सकते हो । पर मैं दिन भर इन ग्रंथों में भरे ज्ञान का बोझ अपने दिमाग़ में ढोता हूँ । सोते समय भी मुझे इस बोझ को ढोना पड़ता है, फिर यह ऐसा बोझ है जिसे मैं चाहूँ तो भी उतार नहीं सकता । अब तुम्हीं बताओ आखिर न्यायसंगत क्या होगा?" श्याम शास्त्री ने पूछा ।

वीरदास को स्मरण हुआ कि किसी के सवाल पूछने पर श्याम शास्त्री किस प्रकार यथोचित ग्रंथ उठाकर उसका ठीक पृष्ठ पलटकर, ठीक ढंग में कैसे सब कुछ स्पष्ट करता था । उसने कहा—"शास्त्रीजी, मुझे अपनी ग़लती का एहसास हो गया है । बोझ ढोने में मैंने बेकार एक मेधावी की तुलना एक मज़दूर से की । उदारता के साथ आप मुझे क्षमा कीजिए ।"

बस अब क्या था, वीरदास की सारी मानसिक व्यथा ग़ायब हो गई । इसके बाद जब कभी वह अपने सिर से बोझ उतारता, तो शास्त्री के प्रति अत्यधिक सहानुभूति प्रकट करते हुए यही कहता—बेचारे मेरे मालिक को कभी ऐसा मौक़ा मिलेगा नहीं ।"

९

[जयराज विचित्र जलप्रपात पार कर गया। इधर मांत्रिक ने राजा को विश्वास दिलाया कि,, वह स्वर्ण-प्रतिमा को भी असली स्त्री के रूप में परिवर्तित कर सकता है। उसने राजा, मंत्री तथा ज्ञानियों को एक सप्ताह तक अनशन व्रत करने की सलाह दी। राजा ने इस बात को अपनी सम्मति दी। आगे पढ़िये......]

दूसरे दिन सबेरे राजा ने मंत्री तथा महाज्ञानियों को बुलवाकर कहा, "आप सब भी मेरे साथ एक सप्ताह तक अनशन-व्रत करेंगे इस बात के लिये मैं आपको अनुमति प्रदान कर रहा हूँ।" इसके बाद राजा ने आदेश दिया कि वे लोग एक सप्ताह तक राजभवन छोड़कर कहीं भी बाहर न जायेंगे।

आदेश सुनने पर उन मंत्रियों को ज्यादा उत्साह में आकर राजा के साथ व्रत रखने की बात खुद ब खुद करने के कारण अब पछतावा होने लगा। मगर अब वे कुछ कर भी नहीं सकते थे। राजा के आदेश के कारण अब कुछ बहाना कर के घर होकर आ भी नहीं सकते थे। उनको जिन जिन चीज़ों की ज़रूरत हुई वे सब चीज़ें राजमहल में ही उनको देने की व्यवस्था हुई।

पहला दिन गुज़रते गुज़रते सब लोग भूख के मारे तड़पने लगे। फिर भी प्रकट रूप में वे अपने चेहरों पर गंभीर भाव दिखाते रहे।

मनोज दास

प्रतिदिन राजा के लिये राजमहल के रसोईघर में जो पदार्थ बनाये जाते थे, उन्हें मांत्रिक भरपेट खाने लगा। उसके खा चुकने के बाद बचा-खुचा खाना मांत्रिक का शिष्य चट कर जाता था।

तीसरे दिन कमज़ोरी के कारण राजा ढीला पड़ गया। चौथे दिन कराहने लगा। इस हालत में फलों के रस का एक घूँट सेवन करने की अनुमति मांत्रिक ने उसे दे दी।

जब तब मांत्रिक राजा को इस बात का वर्णन सुनाता कि अंत में अप्सरा से विवाह करने के बाद राजा को किस प्रकार के भोग और भाग्य उपलब्ध होंगे। ये बातें सुन सुनकर राजा मुस्कुरा लेता था। उसकी आँखों से आनंदाश्रु झर उठते थे। राजा को यह बात भली भाँति विदित थी कि सोने की घाटी में कहीं बहुत सा सोना निक्षिप्त है। इसीलिये राजा इस आशा से अपना समय व्यतीत कर रहा था कि एक सप्ताह के बाद जब इस मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा होगी और वह उससे विवाह करेगा, तब वह उस सुवर्ण प्रदेश का रहस्य भी राजा को बताएगी।

आखिर किसी प्रकार वह सप्ताह बीत गया। आठवें दिन घी मक्खन वगैरह मलकर राजा को नहलवाया गया, और विभिन्न प्रकार के वस्त्र और आभूषणों से अलंकृत किया गया।

मांत्रिक ने मंत्री व महाज्ञानियों को बुलाकर उनसे कहा, "इस समय मुझे महाराजा को स्वर्णप्रतिमा के उस पार स्थित गुफ़ा के अन्दर ले जाना है। राजा वहीं अपना उपवास तोड़ देगा। तुम लोग अपने अपने घर जाकर अब मज़े से भोजन कर सकते हो। मैं अब गुफ़ा में प्रवेश कर ध्यानमग्न बैठ जाऊँगा। मैं नहीं जानता कि उस अवस्था में मैं कितने दिन बैठा रहूँगा। उस कालावधि में मेरे पास पहुँचने की अर्हता केवल महाराज ही रखते हैं। एक ख़ास चेतावनी मैं दे रहा हूँ कि इस समय से तुम लोगों को राजा के समीप पहुँचने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये। मैं उन पर मायाशक्ति का प्रयोग कर रहा हूँ। उस स्थिति में तुम उनके पास आओ तो तुम्हारी ही आयु क्षीण हो जाएगी।"

थोड़ी ही देर में मंत्री और महाज्ञानी अपने अपने घर की ओर दौड़ पड़े। इधर राजा के शरीर में उठ खड़े होने की भी ताकत नहीं थी। एक

खटिया पर लिटा कर ढोते हुए राजभट उन्हें उस प्रतिमा के पास ले गये ।

वहाँ पहुँचने पर मंद मंद मुस्कुराते हुए मांत्रिक बोला, "यह अप्सरा सुवर्णनिधियों का रहस्य जानती है । महाराजा के साथ इसका विवाह होने में अब केवल एक ही दिन बाकी है ।"

मांत्रिक के मुँह से यह बात सुनकर राजा उत्साह से अपनी सारी शक्ति बटोरकर उठ बैठा और मांत्रिक का सहारा लेकर खड़ा हो गया ! बाद में धीरे धीरे प्रतिमा के पीछे स्थित गुफा की ओर चल पड़ा ।

राजा के अंगरक्षकों को भी मांत्रिक ने पहाड़ी तलहटी में ही रहने का आदेश दिया था ।

उनके राजा पर क्या गुज़रने वाली थी, इसकी उन बेचारों को क्या कल्पना? मांत्रिक तो बड़ा ही चतुर निकला । राजा के पास कोई भी न पहुँचे इसलिए अलग अलग लोगों को उसने अलग अलग बहाने बताये थे । 'होनी' की कल्पना न होने के कारण खुद राजा भी तो मांत्रिक की हाँ में हाँ मिलाता रहा था ।

"अरे, मुझे तो इतनी भूख लगी है कि लगता है, इस सुवर्णप्रतिमा को ही निगल जाऊँ । मगर उससे विवाह करना है न !" राजा मांत्रिक से बोल उठा ।

राजा और मांत्रिक के गुफ़ा में प्रवेश करने के समय राजा के नित्यप्रति भोजने के पदार्थ थालों में लेकर राजभट वहाँ पहुँचे । और मांत्रिक के शिष्य के कहने पर थालियाँ वहीं करीने से रखकर वे वहाँ से चले गये । थालों में सँजे पदार्थ देखकर राजा परमानन्दित हो उठा । उसका मुखमण्डल

"हाँ प्रभु, अब आप अपने वस्त्र उतारकर अलग रखिये और उस बिल में प्रवेश कीजिये।" मांत्रिक बोला।

"क्यों? मुझे अपने वस्त्र क्यों उतारने हैं?" राजा ने आश्चर्य में आकर पूछा।

"महाप्रभु, यह भी पूजा का एक अंग है। आप इस बात को न भूलिए कि, शीघ्र ही आप की किस्मत खुलनेवाली है। ऐसे भाग्य के लिये अपने वस्त्र ही नहीं, कोई माँगे तो मैं अपनी चमड़ी भी उधेड़कर दे देता।" मांत्रिक ने कहा।

विवश होकर राजाने मांत्रिक की बात मान ली। मांत्रिक और उसका शिष्य राजा का रत्नजडित कुर्ता, मणियों से जड़ा साफ़ा, सोने की किनारवाली धोती आदि को एक एक करके खोलने लगे। कण्ठहार, अँगूठियाँ आदि आभूषण भी उतार लिये गये।

इसके बाद दोनों ने मिलकर राजा को सुरंग में ढकेल दिया। राजा मन ही मन कहने लगा—"अरे, आँखें फाड़ फाड़ कर देखनेपर भी यहाँ कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा। यह कैसा गहरा अंधःकार है!"

"थोडे समय बाद यही आप के लिये आदत सी बन जाएगी।" राजा को और आगे ढकेलते हुए मांत्रिक ने कहा।

"हम यह नहीं चाहते कि, यहीं रहकर इसकी आदत डाल लें। तुम शीघ्र अपनी पूजा का कार्यक्रम पूरा कर दो।" राजा चिल्ला उठा।

मांत्रिक ने तत्काल अपनी नकली दाढी उतार

अपूर्व कान्ति से दमक उठा। "ओह, मैं ये सारे पदार्थ खा सकता हूँ न?" राजा ने उच्च स्वर में मांत्रिक से पूछा।

"महाराज, जल्दबाज़ी न कीजिये। पूजा का सारा कार्यक्रम पहले संपन्न होना है। देखिये प्रभु, इस दीवार के बीच जो सुरंग है, वह आपको दिखाई दे रही है न? आप अपने घुटनों पर रेंगते हुए उस सुरंग से होकर दूसरी ओर जाकर बाद में मेरे कहे अनुसार कीजिये। काम बहुत ही सरल एवं आसान है। इसके बाद आप अपनी इच्छानुसार सब पदार्थ खा सकते हैं। तदुपरान्त......" मांत्रिक आगे कुछ बोले, इससे पहले राजा बोल उठा, "अप्सरा के साथ विवाह किया जा सकता है।"

कर फ़ेंक दी, राजा के वस्त्र और आभूषण धारण किये और ज़ोर से अट्टहास कर उठा—"अब पूजा का कार्यक्रम समाप्त हो गया है, समझे ?"

"मुझे भूख लगी है। भोजन परोसे हुए थाल इस तरफ़ बढ़ा दो।" राजा ने चिल्लाकर कहा।

मांत्रिक ने सुरंग के थोड़े अंदर घुसकर झाँककर देखा। उसे देख राजा ने आश्चर्य में आकर पूछा, "तुम कौन हो ?"

"दिखाई नहीं देता ? मैं चण्डमार्तण्ड महाप्रभु हूँ।" मांत्रिक ने जवाब दिया।

"व्यर्थ की बात मत करो। तुम अगर राजा हो, तो मैं कौन हूँ ?" राजा ने पूछा।

"शायद मांत्रिक हो तुम ?" राजा वेषधारी मांत्रिक बोला।

"कैसा मांत्रिक ? मैं मंत्र-तंत्र कुछ नहीं जानता। अगर जानता तो अब तक इस गोल पत्थरों को लड्डुओं के रूप में परिवर्तित कर देता।" राजा ने कहा।

"शायद भूल गये होंगे। राजमहल के ख़ज़ाने की चाबी मैं ने कहाँ रखी है—यह बात मैं भूल गया हूँ। इसी प्रकार तुम भी शायद मंत्र तंत्र भूल गये हो। बता दो, वह चाबी कहाँ है ? अगर बताओ, तो पुरस्कार के रूप में तुम्हारे लिये भोजन और रोशनी का प्रबन्ध कर सकता हूँ।" मांत्रिक ने समझाया।

"मैं नहीं बताऊँगा। मुझे अब तुम्हारी धोखाधड़ी का पता चल गया है। अरे नीच, मुझे इस तरह दुर्बल बनाकर धोखा देते हो ?" राजा

क्रोध में आकर गरज उठा।

इसके बाद मांत्रिक के शिष्य ने थाल संभाल लिया और राजा वेषधारी मांत्रिक भोजन पदार्थ चट करने लगा।

"मेरा भोजन मुझे न दोगे ?" राजा ने चिल्ला कर पूछा।

मांत्रिकने राजा के हाथ एक लड्डू देकर कहा, "जब तक तुम ख़जा ने की चाबी का स्थान न बताओगे तब तक तुम्हें हररोज़ एक लड्डू मात्र मिलेगा।"

"और अगर मैं रहस्य बता दूँ, तो मुझे वह एक लड्डू दिये बगैर मार डालोगे। मैं कैसा मूर्ख हूँ; तुम पर विश्वास किया !" यह कहकर अपने आप से कुछ बड़बड़ाते हुए वह लड्डू खाने लगा।

मांत्रिक की बातों पर विश्वास करने का अब राजा को बहुत ही पछतावा हुआ। मगर अब वह कर भी क्या सकता था? 'फिर पछताये क्या होत है, जब चिड़ियन चुग गयी खेत ?'

* * * * * * *

विचित्र खरबूज़ फटकर छितर गया था, इस पर नगर की प्रजा चिन्ता में डूब गयी। बाद में उनको छोड़कर मुनि व जयराज एक अरण्य प्रदेश में पहुँचे।

"लो, देखो, क्षितिज में तो नीले पहाड़ दिखाई दे रहे हैं, उन्हें पारकर आगे बढ़ना अत्यन्त कठिन है। लेकिन तुम्हारे राज्य की स्वर्ण-प्रतिमा में प्राण-प्रतिष्ठा करने के लिये तुम्हारी इस लम्बी यात्रा में सफलता चाहते हो, तो किसी प्रकार उन पहाड़ों को पार करना ही होगा।" मुनि ने जयराज से कहा।

"अदृश्य होने का मंत्र मैं जानता हूँ। ज्ञानभूमि के राजाने मुझे इस रहस्य का उपदेश दिया है। मैं यहाँ अदृश्य होकर उन पहाड़ों को पार कर पुनः प्रत्यक्ष हो सकूँगा।" जयराज ने कहा।

"मगर, वह विद्या मानव विश्व तक ही सीमित है। तुम अब जिस प्रदेश में प्रवेश करने जा रहे हो, वह मानव-विश्व नहीं है। वहाँ के लोग मानवों जैसे दिखाई देते हैं, पर वास्तव में वे साधारण मानव नहीं हैं।" मुनि ने कहा।

"तब तो मैं वहाँ तक पैदल चलकर जाऊँगा।" जयराज ने कहा।

"यह भी संभव नहीं है, क्योंकि तुम चाहे जितने दिन भी पैदल चलो, इस जंगल को पार नहीं कर सकोगे। वहाँ के लोगों से मिलना है, तो तुम्हें गुप्त-मार्ग से जाना होगा।" मुनि ने समझाया।

"हे महात्मन इस हालत में आप के सिवा कोई और मेरी सहायता नहीं कर सकेगा। मुझ पर कृपालु होकर आप ही मुझे वहाँ तक पहुँचा दीजिये।" जयराज ने प्रणाम करके मुनि से प्रार्थना की।

"अच्छी बात है।" यह कहकर मंदहास करते हुए मुनि जयराज का हाथ पकड़कर पहाड़ों की ओर चल पड़ा।

जयराज को पलभर के लिये ऐसा लगा कि वह अपने होश खो बैठा है। फिर दूसरे क्षण ऐसा

प्रतीत हुआ कि वह किसी पक्षी के पर जैसा हल्का होकर हवा में उड़ा जा रहा है। उसे एकदम शान्ति का अनुभव होने लगा, मन में कोई विचार या किसी भी प्रकार की हलचल न रही और उसने संतुष्टिपूर्वक आँखें बन्द कर लीं।

इस हालत में वह मुनि के साथ कितनी देर तक चलता रहा इसका ज्ञान भी जयराज को नहीं रहा। जब उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि, किसीने उसकी पीठ पर हल्के से थपथपाया है; तब उसने आँखें खोलकर देखा—वह एक छोटी सी पहाड़ी के एक चट्टान पर मुनि के साथ बैठा हुआ है। सबेरा होने को था और पूर्वी दिशा में आकाश में व्याप्त मेघ खण्ड समुद्री फेन की भाँति उस प्रदेश में एक विचित्र सी शोभा प्रदान कर रहे थे।

पहाड़ की तलहटी के मैदान में कुछ वृक्ष थे, जिनके तने ताड़ के तने जैसे लग रहे थे; मगर उनकी शाखाएँ व पत्ते वगैरह बिलकुल दिखाई नहीं दे रहे थे। वे मेघों के बीच घुसकर जैसे आकाश को स्पर्श कर रहे थे।

"ऐसे ऊँचे पेड़ मैंने आज तक कहीं भी नहीं देखे हैं।" जयराज ने आश्चर्य प्रकट किया।

"ये वृक्ष सदा इतने ऊँचे नहीं होते। प्रातःकाल में केवल थोड़ी ही देर के लिए वे इसलिये इतने ऊँचे होते हैं कि आकाशनिवासी देवकुमार आसानी से इनके मधुर फल तोड़ लें।" मुनि ने ऊँचे पेड़ों का रहस्य खोल दिया।

इस के थोड़ी ही देर बाद जब जयराज ने फिर मैदान की ओर देखा तब तक वे वृक्ष अपने साधारण कद के हो गये थे। यह देख जयराज बोल उठा—"वाह, यह तो एक अद्भुत विश्व है।"

"इस वक्त वह मानव लोक की सीमा पर हैं। उत्तम जीवन व्यतीत करनेवाले लोग यहाँ निवास करते हैं। तुम शीघ्र ही उनमें से कुछ लोगों को देख सकोगे।" मुनि ने कहा।

इसी समय एक हीन स्वर उन्हें सुनाई दिया। जयराज ने पीछे मुड़कर देखा और वहाँका दृश्य देखकर वह भय एवं आश्चर्य में आकर जड़वत वहीं खड़ा रह गया।

(सशेष)

सही निर्णय

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौटकर आए। पेड़ पर से शव उतारा और कन्धे पर डालकर सदा की भाँती मौन श्मशान की ओर चलने लगे। तब उस शव में निवास करनेवाले बेताल ने राजा से कहा—"हे राजन् आप जिस कार्य को साबित करने के लिए इतने दृढ़ विश्वास के साथ घोर अंधकार में अर्द्धरात्री के समय इस भयानक श्मशान में जो अथक श्रम कर रहे हैं उसे देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है। क्योंकि इस बात में थोड़ी बहुत सच्चाई अवश्य है कि दृढ़ लगन और विश्वास के साथ किसी कठिन से कठिन कार्य को भी साधा जा सकता है। लेकिन कुछ लोग अपनी भीरुता और मानसिक दुर्बलता के कारण अपने लक्ष्य की सफलता को प्राप्त करने से वंचित रह जाते हैं। इसके उदाहरण स्वरूप मैं आपको शरश्चंद्रिका नामक राज्य के राजा विक्रम सिंह की कहानी सुनाता हूँ। अपने श्रम को भुलाने के लिए इसे सुन लिजिए।"

बेताल कथा

बैठने ही वाली थीं कि उसी समय पास की गजशाला से हाथियों की चिंघाड़ सुनाई दी। उनके चिंघाड़ने की आवाज़ सुनकर रथ में जुते हुए घोड़े भड़क उठे और राजकुमारी सहित रथ को लेकर एक घने जंगल की ओर दौड़ पड़े।

उसी जंगल में प्रताप नाम का एक डाकू निवास करता था, उसने ज्योंहि उस दृश्य को देखा त्योंहि अपने घोड़े पर सवार होकर उस रथ के समीप पहुँचा और बड़ी सावधानी व चालाकी से उसने राजकुमारी नंदिनी को रथ से नीचे उतार लिया।

अपने प्राणों की रक्षा करने वाले उस व्यक्ति के प्रति नंदिनी ने अपार कृतज्ञता प्रकट करते हुए उससे पूछा— "कौन हो तुम ? और इस घने जंगल में क्यों रहते हो ?"

इस पर डाकू ने उत्तर दिया— "हे सुन्दरी, मैं एक डाकू हूँ और मेरा नाम प्रताप है। किन्तु तुम्हारे अद्भुत सौन्दर्य को देखकर मैं तुम पर मोहित हो गया हूँ।"

डाकू की इच्छा जानकर राजकुमारी बड़े विस्मय में पड़ गयी। उसने उस डाकू से कहा— "मैं तो अश्वपुरी की राजकुमारी हूँ और मैं तुमसे विवाह नहीं करना चाहती।"

राजकुमारी की बात सुनकर प्रताप ने बड़ी ही विनम्रता से कहा— "क्षमा कीजिए राजकुमारी, मैं आपको सकुशल आपकी राजधानी में पहुँचाए देता हूँ।"

राजकुमारी को डाकू का उत्तर सुनकर बड़ी

इस प्रकार बेताल ने राजा को कहानी सुनाना प्रारम्भ कर दियाः—

अश्वपुरी की राजकुमारी नंदिनी अत्यन्त सौन्दर्यवती थी। उसके साथ विवाह करने के लिए अनेकों राजकुमार लालायित थे। लेकिन राजकुमारी नंदिनी विजयपुरी के युवराज वसन्तसेन के साथ विवाह करना चाहती थी।

राजकुमारी नन्दिनी ने अपने मन की बात अपने पिता कीर्तिकान्त से बताई। अपनी पुत्री का विचार जानकर राजा कीर्तिकान्त बड़े ही पसोपेश में पड़ गया।

उन्हीं दिनों में से एक दिन की बात है। राजकुमारी नंदिनी वन-विहार करने के लिए तैयार होकर रथ पर बैठी। किन्तु उसकी सखियाँ अभी

प्रसन्नता हुई और उसके पीछे पीछे राजधानी की ओर चल दी। अभी वे कुछ ही दूर जा पाए थे कि तभी पृथ्वी को कंपा देनेवाले कदमों की आहट सुनाई दी। नंदिनी भय से काँप उठी और डाकू प्रताप भी डर के मारे भाग खड़ा हुआ।

फिर कुछ ही क्षणों में लम्बकर्ण नामक राक्षस नंदिनी के समीप आया और बोला—"वाह, कैसा अद्भुत सौंदर्य है तुम्हारा। यहाँ तक कि मुझ जैसा राक्षस भी तुम्हारे सौन्दर्य का दीवाना हुआ जा रहा है।"

राक्षस की बातें सुनकर नंदिनी विचलित हुए बिना ही बोली— "हे राक्षसराज, मैं अश्वपुरी की राजकुमारी हूँ। और दुर्भाग्यवश इस जंगल में आकर फँस गई हूँ।"

"हे राजकुमारी, हो सकता है यह तुम्हारा दुर्भाग्य हो, किन्तु मेरे लिए तो यह एक सद्भाग्य की बात है। मैं तुमसे विवाह करना चाहता हूँ।"

"हे राक्षसराज, तुम चाहो तो इसी क्षण मारकर मुझको खा डालो, किन्तु मैं तुमसे विवाह नहीं करना चाहती।" राजकुमारी नंदिनी ने उत्तर दीया।

राजकुमारी की बातों को सुनकर राक्षस बड़ा ही उदास हो गया और बोला— "हे राजकुमारी, यदि तुम मुझसे विवाह करना नहीं चाहती तो मैं इसे अपना दुर्भाग्य ही मानूँगा। लेकिन मैं तुम जैसी सौन्दर्यशालिनी युवती को मारकर नहीं खा सकता।" यह कहकर राक्षस चला गया।

इसके बाद राजकुमारी आगे बढ़ी। अभी वह थोड़ी ही दूर गई थी कि उसने देखा एक छोटी सी कुटिया के सामने

पेड़ के नीचे गोवर्धन नामक एक युवक आँखें बन्द किए ध्यानमग्न होकर बैठा हुआ है। उस संन्यासी को देखकर राजकुमारी ने सोचा कि यदि वह उसके आश्रय में जाएगी और उससे कहेगी तो वह ज़रूर उसे उसकी राजधानी में पहुँचा देगा। और यह सोचकर नंदिनी उसी की शरण में गई।

लेकिन थोड़ी देर में उस संन्यासी ने ज्यों ही आँखें खोलीं त्यों ही उसकी दृष्टि सामने खड़ी राजकुमारी नंदिनी पर पड़ी। उसके अनुपम और अद्भुत सौन्दर्य को देखकर वह भी चकित रह गया।

फिर उसने नंदिनी से पूछा— "हे अनुपम सौन्दर्यवती बाले ! कौन हो तुम ?"

इस पर राजकुमारी नंदिनी ने अपना सारा वृतान्त कह सुनाया और उसने उस संन्यासी से निवेदन किया कि उसे उसकी राजधानी में पहुँचाने का कोई प्रबन्ध करे।

उसकी सारी कहानी सुनने के बाद संन्यासी ने उससे कहा— "हे राजकुमारी, मैं अवनि के राज्य का राजा गोवर्धन हूँ। जीवन के प्रति विरक्त होकर मैंने संन्यास ले लिया है। किन्तु आज तुम्हें देखने के बाद मेरे अन्दर जीवन के प्रति पुनः अनुराग जाग उठा है।"

"हे योगीराज मुझे क्षमा करें, मैं आपकी इच्छा पूरी नहीं कर सकती। हाँ यदि ज़रूरी हुआ है तो मैं एक संन्यासिनी के रूप में अपना जीवन व्यतीत कर सकती हूँ।" नंदिनी ने उत्तर दिया।

"मुझे क्षमा करो, राजकुमारी आज के लिए तुम यहीं विश्राम करो। कल प्रातः हम तुम्हारे नगर के लिए प्रस्थान करेंगे।" गोवर्धन ने जवाब दिया।

इसी समय बाहर उन्हें घोड़े के टापों की आवाज़ सुनाई दी। एक युवक बड़े ही मूल्यवान वस्त्राभूषण धारण किये हुए घोड़े पर सवार वहाँ आ पहुँचा, फिर घोड़े से उतरकर उसने संन्यासी को प्रणाम किया और कहा— "हे महात्मन् मैं शरश्चंदिका राज्य का राजा विक्रमसिंह हूँ। मैं इधर जंगल में शिकार खेलने के लिए आया था और शिकार खेलते खेलते बहुत थक गया हूँ। साथ ही बड़े ज़ोर की प्यास भी लगी है। यहाँ आपका आश्रम देखकर मैं अपनी प्यास बुझाने के लिए आपके पास चला आया। क्या आप मुझे थोड़ा

जल पिलाने का कष्ट करेंगे ?"

अभी वह कह ही रहा था कि उसकी दृष्टि एक ओर खड़ी नंदिनी पर पड़ी। उसने विस्मित होकर नंदिनी से पूछा— "तुम तो अश्वपुरी की राजकुमारी नंदिनी हो न ?"

नंदिनी ने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया। विक्रमसिंह खुशी से फूला न समाया, उसने कहा—

"यह मेरा परम सौभाग्य है कि आज मैं तुम्हें यहाँ पर देख सका। लेकिन तुम यहाँ कैसे आईं।"

राजकुमारी ने पूरे विस्तार के साथ अपना सारा वृतान्त कह सुनाया। यह सुनकर विक्रम सिंह ने कहा— "कोई बात नहीं, मैं तुम्हें तुम्हारी राजधानी पहुँचाने की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर लेता हूँ।" यह कहकर उसने संन्यासी के हाथ से जल का पात्र लेकर अपनी प्यास बुझायी और संन्यासी से बोला— "स्वामीजी आप चिन्ता करें, मैं राजकुमारी को सकुशल उसकी राजधानी में पहुँचा दूँगा।" इसके बाद वह राजकुमारी को अपने घोड़े पर बिठा कर वहाँ से चल दिया। वह सीधा उसे लेकर अपनी राजधानी में आ गया।

वहाँ पहुँचकर विक्रमसिंह राजकुमारी को अपने विशेष कक्ष में ले गया। उस कक्ष में एक जगह नंदिनी का एक बड़ा सा आदमक़द चित्र लगा था। उस चित्र को देखकर राजकुमारी को बड़ा आश्चर्य हुआ।

राजकुमारी को आश्चर्यचकित देख, राजा विक्रमसिंह ने नंदिनी से कहा—"मैं कबसे तुमसे विवाह की इच्छा अपने हृदय में पाले हुए हूँ। और आजकल कुछ दिनों से मैं रोज सपनों में

तुम्हें ही देखता हूँ। तुमसे विवाह की इच्छा में एक पत्र भी मैंने तुम्हारे पिता को लिखा है। यदि तुम मेरा प्रस्ताव अस्वीकार करोगी तो मैं तुम्हारे पिता को युद्ध में पराजित कर के ही सही, तुमसे विवाह अवश्य करूँगा।"

इस पर नंदिनी ने कहा—"महाराज, कृपया आप मुझसे विवाह करने का हठ न करें। क्योंकि मैंने अपने हृदय में विजयपुरी के राजकुमार वसंतसेन को अपने पति के रूप में वरण कर लिया है।"

राजकुमारी का जवाब सुनकर विक्रमसिंह क्रोध से भर कर बोला—"नंदिनी, मैं तुम्हें किसी भी हालत में नहीं छोड़ूँगा। यदि तुम मेरी बात नहीं मानोगी तो मैं तुमसे आसुरिक विधान से ज़बरदस्ती शादी करूँगा।" यह उत्तर सुन कर राजकुमारी नंदिनी ज़ोर से खिलखिलाकर हँस पड़ी

विक्रमसिंह ने उसे इस प्रकार हँसता देखकर विस्मित होकर पूछा—"क्या बात है? इस प्रकार तुम क्यों हँस रही हो?"

महाराज, मेरे हँसने से आपका कोई मतलब नहीं, अगर आप मुझसे ज़बरदस्ती शादी करना चाहते हैं तो आपको एक काम करना होगा। जंगल में मुझसे मिले डाकू प्रताप, लम्बकर्ण नामक राक्षस तथा संन्यासी गोवर्धन इन तीनों को यहाँ बुलवाइए। फिर डाकू प्रताप और राक्षस लम्बकर्ण का सम्मान पूर्वक सत्कार कीजिए। इसके बाद उस संन्यासी गोवर्धन को कठोर दण्ड दीजिए, तब आप मेरे साथ विवाह कीजिए।" नंदिनी ने अपनी शर्त रखी।

यह सुनकर विक्रमसिंह कुछ क्षण मौन रह कर बोला—"हे राजकुमारी, मुझे क्षमा करो। तुमको इसी क्षण मैं तुम्हारे राज्य में पहुँचाने का प्रबन्ध किए देता हूँ।"

फिर इतना कहकर राजा विक्रम सिंह ने राजकुमारी नंदिनी को बहुत से रत्नभूषण देकर सम्मान पूर्वक उसे उसकी राजधानी अश्वपुरी भेज दिया।

इस प्रकार कहानी सुनाकर बैताल ने कहा—"राजन्, राजकुमारी ने विक्रम सिंह के आगे शर्त क्यों रखी कि उसके साथ विवाह करने से पूर्व डाकू और राक्षस को सम्मानित किया जाय तथा संन्यासी को कठोर दण्ड दिया जाय?

विक्रमसिंह जिस कन्या को इतना चाहता था वह कन्या जब उसके हाथ में आ गई तब उसने उसे क्यों छोड़ दिया? क्या इसका कारण विक्रमसिंह की भीरुता एवं मानसिक दुर्बलता ही नहीं थी? और राजकुमारी का जोरों से खिलखिलाकर हँसने का क्या अर्थ था। यदि जानते हुए भी मेरे इस संदेह का समाधान तुम नहीं करते तो तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जाएँगे।"

इस पर विक्रमार्क ने उत्तर दिया— बेताल, सुनो, राजकुमारी के ज़ोर ज़ोर से खिलखिलाकर हँसने के पीछे एक ख़ास कारण था। जब उसने वसन्तसेन नामक राजकुमार से विवाह करने की अपनी इच्छा क्रमशः डाकू, राक्षस व संन्यासी के सामने प्रकट की तब तीनों में से किसी ने भी उससे ज़बरदस्ती शादी करने का प्रयास नहीं किया। बल्कि सबने उससे क्षमा माँगी, परन्तु एक राज्य का राजा होकर भी विक्रमसिंह ने उसके साथ बलपूर्वक आसुरिक विधान से विवाह करने की धमकी दी। यही बात सोच कर नंदिनी को ज़ोरों की हँसी आ गई। इसके माध्यम से ही नंदिनी ने उसके सामने अपना यह विचार ज़ाहिर किया कि राजा उन तीनों (डाकू, राक्षस व संन्यासी) की अपेक्षा ज़्यादा नीच एवं दुष्ट है। नंदिनी की बात का आशय समझकर विक्रमसिंह ने अपना विचार बदल लिया। क्योंकि उसके अंतर मन की गहराई में छिपे नीति एवं नियम उभर कर सामने आ जाते हैं, जिससे उसमें विवेक उत्पन्न हो जाता है, जिससे उसे अपनी भूल का पता चलता है। इसलिए इसे उसकी भीरुता व मानसिक दुर्बलता नहीं कहा जा सकता।

डाकू, एवं राक्षस का अभिनन्दन करके संन्यासी को दण्ड देने की बात नंदिनी ने इसलिए कही थी, क्योंकि उन दोनों (डाकू एवं राक्षस) ने नंदिनी को उदारता के साथ उसकी राजधानी लौट जाने की सम्मति दी थी, जबकि संन्यासी ने उसे एक अपरिचित व्यक्ति पर विश्वास करके उसे उस व्यक्ति राजा विक्रम सिंह के हाथों सौंप दिया था, जिसके कारण नंदिनी मुसीबतों का शिकार हो गई

इस प्रकार राजा के मौन होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पुनः पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)

दिन दहाड़े दगा

एक दिन की बात है, ज़मीन्दार वीरभद्र गजपति के पास एक भील युवक अपने साथ कुछ जड़ी बूटियाँ लेकर आया और उन्हें उस ज़मीन्दार को देते हुए उस भील युवक ने कहा—"हुज़ूर, विन्ध्याचल पर्वत पर ही केवल ये जड़ी बूटियाँ पाई जाती हैं। और ये इतनी बढ़िया क़िस्म की औषधियाँ हैं कि यदि कोई इनका काढ़ा बनाकर पिए तो वह सभी बीमारियों से छुटकारा पा लेगा ।"

यह सुनकर ज़मीन्दार ने अपने दिवान को बुलाया और उस भील युवक को एक सौ मुद्राएँ देने का आदेश दिया ।

इस पर दिवान ने ज़मीन्दार को सलाह दी कि— "इतना बड़ा इनाम देने से पूर्व आपको चाहिए कि अपने कुल-वैद्य को बुलाकर इन जड़ी बूटियों की ठीक तरह से जाँच करवा लीजिए ।"

दिवान की बात मानकर ज़मीन्दार ने अपने कुल-वैद्य धर्मदास को बुलवा भेजा । कुल-वैद्य ने उन जड़ी-बूटियों की जाँच करके कहा— " वैसे तो इसकी कोई उपयोगिता नहीं है। यदि कोई उपयोगिता है भी तो किसी भी स्थिति में कम से कम आपके लिए तो नहीं है ।"

वैद्य की बात सुनकर ज़मीन्दार कुछ क्रोधित होकर बोला— "इसका मतलब, कि इसकी कोई उपयोगिता है भी तो मेरे लिए नहीं । यदि मेरे लिए इसकी उपयोगिता नहीं तो क्या इस भील युवक के लिए है ?"

वैद्य ने मुस्कुराकर कहा— "हुज़ूर आपने सत्य कहा । जंगल में जहाँ तहाँ सर्वत्र प्राप्त होने वाले जड़ व पत्तियों को देकर जो आपसे सौ मुद्राएँ ले जा सकता है तो उसकी उपयोगिता आप को होगी या इस भील युवक को ?"

इस प्रकार बड़ी ही निपुणता से सच्चाई को प्रकट करने वाले वैद्य पर ज़मीन्दार बड़ा ही प्रसन्न हुआ और वैद्य की प्रशंसा करने लगा । इधर मौक़ा पाकर भील युवक अपनी जान बचाकर वहाँ से भाग गया ।

काव्य कथाएँ:

राक्षस मुद्रिका—३

मगध राज्य के शासक नन्दों के द्वारा चाणक्य का अपमान हुआ । चंद्रगुप्त ने चाणक्य की सहायता से नन्दों को पराजित कर मगध राज्य पर अपना अधिकार कर लिया । इसके बाद चाणक्य चंद्रगुप्त का मंत्री बन गया । युद्ध में नन्दों की सैनिक सहायता करने वाले पर्वतक का वध चाणक्य ने बड़े युक्तिपूर्ण ढंग से कराया ।

नन्दों की पराजय होने के बाद उनका विश्वास पात्र मंत्री राक्षस, अपने प्रिय जनों व परिवार जनों को अपने मित्र एवं नगर के प्रमुख जौहरी चन्दनदास के आश्रय में छोड़कर पाटलीपुत्र से निकल गया ।

चाणक्य द्वारा रचे, षड्यंत्र में प्राण गँवाने वाले पर्वतक का पुत्र मलयकेतु था । मंत्री राक्षस सीधे मलयकेतु के पास गया और उससे मिलकर दोस्ताना सम्बन्ध स्थापित किये ।

नन्दों के वंश को समूल नष्ट करने वाले चंद्रगुप्त एवं चाणक्य के साथ राक्षस ने प्रतिकार लेने की ठानी। उसने इस कार्य की सफलता के लिए समीपवर्ती राज्य के राजाओं से भी मित्रता करके उनकी सहायता प्राप्त की।

गुप्तचरों द्वारा राक्षस की योजनाओं की ख़बर चाणक्य को लगी। राक्षस की बुद्धि और राजभक्ति से चाणक्य भलीभाँति परिचित था। इसलिए चाणक्य ने राक्षस को अपने पक्ष में कर लेना ही उचित समझा। न्याय शांति एवं सुरक्षा के लिए बहुत ख़तरा उत्पन्न हो जाता। यह विचार कर चाणक्य ने एक योजना बनाई।

चाणक्य ने जौहरी चंदनदास को बुलवाकर उससे कहा— "तुमने राजद्रोह किया है।" इस पर चंदनदास ने कहा— "मैंने अपने राजा के विरुद्ध ऐसा कोई अपराध नहीं किया है फिर मैं राजद्रोही क्योंकर हो गया?" चाणक्य ने उससे पूछा— "क्या आपने राजा के शत्रु को आश्रय नहीं दिया है? शत्रु को आश्रय देना राजद्रोह नहीं है?

"मंत्रिवर जब मेरे मित्र की पत्नी, बच्चे, व परिवार जन किसी विपदा में फँसे हों और मित्र ने मुझसे इस हालत में उनकी रक्षा करने का अनुरोध किया हो,तब एक मित्र के अनुरोध को मैं कैसे ठुकरा सकता हूँ?" चन्दनदास ने उत्तर दिया ।

इसके कुछ दिनों बाद एक दिन चाणक्य ने चंद्रगुप्त से कहा— "राजन, चाहे जिस प्रकार हो सके किसी भी उपाय से मलयकेतु तथा राक्षस के मध्य फूट डालकर उनकी घनिष्ठ मैत्री तोड़कर राक्षस को अपनी ओर मिला लिया जाय। इस लिए हमें एक स्वांग रचना होगा और लोगों के बीच यह अफ़वाह फैलानी होगी कि मेरे एवं आपके बीच किसी प्रकार की ग़लतफहमी और मनमुटाव पैदा हो गया है ।"

चंद्रगुप्त ने इसके लिए अपनी सहमति दे दी। दोनों ने मिल कर एक योजना बनाई, उस योजना को अनुसार, राजा ने नगर में ढिंढोरा पिटवा दिया, कि इस बार सारे नगर में वसंतोत्सव मनाया जाएगा ।
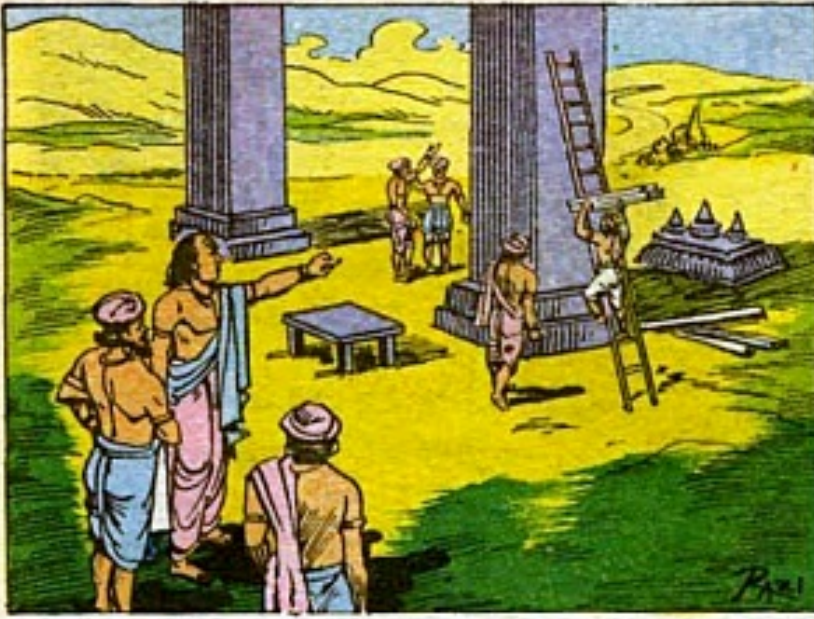
जब चारों ओर नगर को सजाने सँवारने का काम चल रहा था कि तभी चाणक्य क्रोधित होकर चिल्लाता हुआ-नगर के द्वार पर जहाँ तोरण-पताका बाँधी जा रही थी, आया और बोला-"बन्द करो ये सब तमाशा, कोई उत्सव नहीं मनाया जाएगा। सब अपने अपने घरों को जाओ। यह मेरा आदेश है।" उसके इस व्यवहार से सब लोग बड़े विस्मित हुए।

जनता ने चाणक्य के इस बर्ताव की शिकायत राजा चंद्रगुप्त से की। राजा ने भरी सभा में चाणक्य को बुला कर इसकी कैफ़ियत माँगी। चाणक्य ने क्रुद्ध होकर जवाब दिया— "राजन, क्या इस समय जबकि मलयकेतु और राक्षस दोनों मिलकर हमारे राज्य पर हमला करने की सोच रहे हैं उस समय नगर में इस प्रकार उत्सव मनाना क्या शोभा देता है ? उत्सव नहीं मनाया जाएगा।"
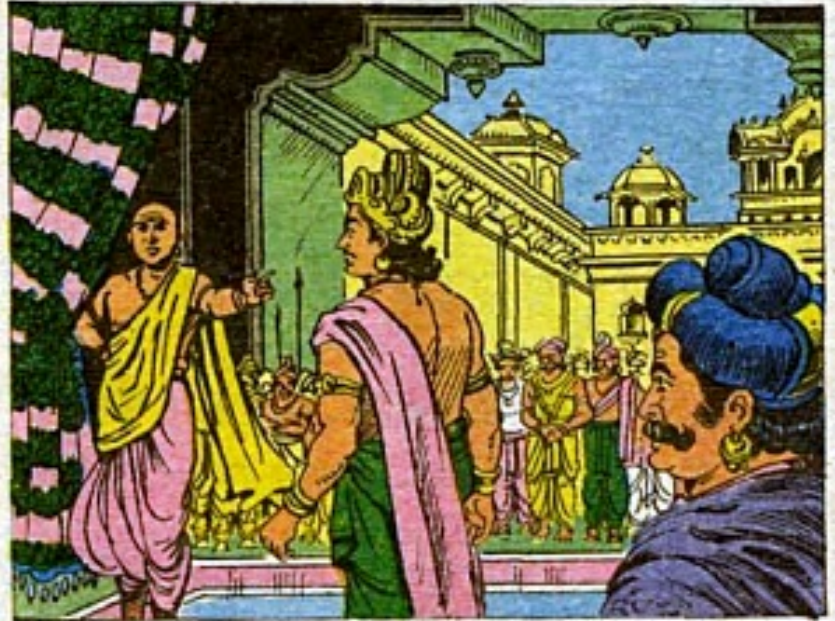
इसी प्रकार उन दोनों के बीच कुछ समय वाद-विवाद चलता रहा। अचानक राजा चन्दगुप्त ने चाणक्य से कहा— "मंत्रीवर, वह राक्षस आपसे कई गुना ज्यादा अक़्लमंद है।" "ऐसी बात है ? तो महाराज मैं इसी वक्त अपने मंत्रीपद से त्याग-पत्र देता हूँ।" ऐसा कहते हुए चाणक्य बहुत क्रोधित होकर सभा-भवन से बाहर चला गया।

(क्रमशः)

उपचार का ढंग

सुमेरुपुर में विश्वपति नामक एक प्रसिद्ध वैद्य रहा करता था। उनके साथ उसके दो शिष्य भी रहते थे, जिनमें से एक का नाम था अनन्त एवं दूसरे का नीलकंठ ।

अनन्त के अन्दर ग्रहणशक्ति एवं धारणशक्ति बहुत ज्यादा थी । वह महान आयुर्वेदिक ज्ञाताओं के द्वारा लिखित आयुर्वेदिक शास्त्रों के सारे सूत्र एक साँस में बिना रुके ही मौखिक सुनाकर विश्वपति को आश्चर्य चकित कर देता था। विश्वपति उसकी इस विलक्षण प्रतिभा और बुद्धिमत्ता की सराहना करता, एवं मन ही मन यह सोचकर उसे बड़ी खुशी होती कि एक दिन उसका यह शिष्य उससे भी बढ़कर महान् आयुर्वेद का ज्ञाता और सफल वैद्य बनेगा ।

इधर नीलकंठ (दूसरा शिष्य) साधारण ज्ञानी था। वह सदा अपने गुरु का ही अनुसरण किया करता था। वह उनके बताए अनुसार रोगियों की जाँच-पड़ताल करके उनका निदान किया करता था। इसके बारे में विश्वपति सोचा करता था कि नीलकंठ किसी तरह आयुर्वेद के प्राथमिक सूत्रों को ही समझ ले तो कम से कम् अपनी रोजी रोटी तो कमा सकेगा। इसलिए वह उसकी ओर ज़्यादा ध्यान नहीं देता था ।

कुछ समय के पश्चात् अनन्त और नीलकंठ विश्वपति के यहाँ से आयुर्वेद की शिक्षा ग्रहण कर अपने घर स्वर्णपुर लौट गए। वहाँ पहुँचकर दोनों ने अपना अलग अलग दवाखाना खोल लिया।

कुछ वर्ष व्यतीत होने के बाद की बात है। एक दिन एक व्यक्ति स्वर्णपुर से सुमेरुपुर विश्वपति से अपनी लम्बी बीमारी का निदान कराने आया। विश्वपति को जब यह पता चला कि यह व्यक्ति स्वर्णपुर से आया है तो उसे अपने दोनों शिष्यों अनन्त एवं नीलकंठ की याद आ गई ।

विश्वपति ने उस व्यक्ति से अपने दोनों शिष्यों

शैलबाला सिंह

के बारे में पूछा तो उस व्यक्ति ने जवाब दिया— "वैद्यराज, नीलकंठ का तो धंधा बड़े ज़ोरों से चल रहा है,वह तो खूब कमा रहा है। लेकिन अनन्त चिकित्सा का काम छोड़ना चाहता है।"

ऐसा सुनकर विश्वपति आश्चर्य चकित हो उठा और उसने अपने अंदर यह विचार किया कि जिस अनन्त के भविष्य के बारे में वह बड़ा ही आशावान् था कि वह एक कुशल वैद्य बनेगा। ऐसा क्या कारण है जो वह अपने इस पेशे में असफल हो गया। इसका कारण जानने के लिए वह स्वयं स्वर्णपुर चल दिया।

विश्वपति जब अनंत के घर पहुँचा तो उसने अनन्त को अपने घर के अन्दर किसी से बात करते पाया। यह चुपचाप से खड़ा होकर उनका वार्तालाप सुनने लगा।

अनन्त अपने मरीज़ को समझा रहा था— "तुम्हारी यह बीमारी तो बिल्कुल साधारण सी है, बस थोड़ा सा ज़ुकाम हो गया है। इतनी थोडी सी बात के लिए क्यों घबराते हो? थोड़ी हल्दी और चन्दन पीसकर उसे खूब फेंट कर अपने चेहरे पर उसका लेप कर दो। देखोगे, कि थोड़े समय में ही तुम्हारी तबीयत ठीक हो जाएगी। बस अब जाओ डरने की कोई बात नहीं।"

इस पर मरीज़ ने नाराज़ होकर कहा— "वैद्यजी, जो नुस्खा आप ने बताया, वह तो मेरी नानी भी बता सकती है, फिर इतना कष्ट करके मुझे आपके पास आने की भला ज़रूरत ही क्या थी?" यह कहकर वह व्यक्ति वहाँ से चला गया।

उस व्यक्ति के चले जाने के बाद विश्वपति ने अनन्त के घर में प्रवेश किया। अनन्त ने अपने गुरु के चरणों में प्रणाम किया। विश्वपति ने उसे लेकर अपने गले से लगा लिया, फिर उन्होंने अनन्त से उसकी कुशल-क्षेम पूछी। अनन्त ने कहा— "गुरुदेव, चिकित्सा के सम्बन्ध में मैं अपने रोगियों की बीमारी की ठीक तरह से पहचान कर ही उन्हें उस रोग का सही निदान भी बताता हूँ। फिर भी जाने क्यों यहाँ के लोग मेरे पास अपना इलाज कराने के लिए ज़्यादा संख्या में नहीं आते।"

विश्वपति ने मुस्कुराते हुए पूछा— "अच्छा, ऐसी बात है! लेकिन यह तो बताओ, नीलकंठ

का क्या समाचार है ?"

"उसका काम तो बहुत बढ़िया चल रहा है गुरुदेव ।" अनंत ने जवाब दिया ।

विश्वपति ने कहा— "अनंत, क्यों न हम उसके घर भी हो आएँ, मैं उससे भी मिलना चाहता हूँ, बहुत दिन हो गये तुम दोनों को देखे हुए ।"

विश्वपति और अनंत जब नीलकंठ के घर पहुँचे तो उन्होंने देखा मरीज़ों की वहाँ भीड़ लगी थी । सभी नीलकंठ वैद्य की प्रतीक्षा कर रहे थे, उन्होंने यह भी देखा कि जो मरीज़ अभी कुछ समय पहले अनंत के पास अपनी चिकित्सा कराने आया था, वही अपना इलाज नीलकंठ के पास कर रहा है । नीलकंठ ने उसके सारे शरीर की जाँच पड़ताल की और फिर उससे कहा— "देखो भाई, ऐसा कहा जाता है कि सर्दी जुकाम अकेला ही दस बीमारियों के बराबर होता है और समय पर यदि इसका ठीक इलाज न हुआ तो यह और ही किसी गंभीर बीमारी का कारण बन जाता है । पर कोई बात नहीं तुम ठीक समय पर मेरे पास आ गए, इसलिए अब तुम्हें डरने की कोई बात नहीं । मैं तुम्हारे चेहरे पर अभी एक ऐसी औषधी का लेप लिए देता हूँ जिससे तुम्हें कुछ समय के अन्दर ही सर्दी जुकाम से राहत मिल जाएगी । और तुम चंद लमहों में ही भले चंगे हो जाओगे ।" यह कह कर पास ही पड़े एक बरतन से पीले रंग का एक लेप लेकर नीलकंठ उस रोगी के चेहरे पर मलने लगा ।

यह देख कर विश्वपति ने धीरे से अनंत के कानों में कहा— "देखते हो न अनन्त ! नीलकंठ उसी हल्दी और चन्दन का लेप बनाकर उस रोगी के चेहरे पर मल रहा है जिसे उसने एक अद्भुत और अचूक औषधि कहकर वह रोगी के मन को आश्वस्त कर रहा है ।"

"गुरुदेव, केवल इतना ही नहीं, यह जानते हुए भी कि सर्दी-जुकाम एक साधारण सी चीज़ है, यहाँ तक कि शास्त्रों में भी इसके लिए कोई ख़ास औषधि नहीं है, नीलकंठ ने उस रोगी को एक भयंकर बीमारी बता कर उसे डरा दिया । यह मुझे बिल्कुल ठीक नहीं लगा ।" अनन्त ने अपना असंतोष व्यक्त करते हुए कहा ।

विश्वपति ने धीरे से मुस्कराते हुए कहा—

"देखो बेटे अनन्त, एक वैद्य की दृष्टि से नीलकंठ के शब्दों में मुझे कोई दोष नहीं दिखता।" अपने गुरु के मुँह से ऐसी बात सुनकर अनन्त को बड़ा ही विस्मय हुआ ।

विश्वपति ने उसके कन्धे पर थपकी देकर कहा— "सुनो बेटे अनंत, कुछ ऐसे लोग होते हैं जो अपने शरीर में या दूसरों के अन्दर किसी व्याधि के लक्षण देखकर बड़े घबरा जाते हैं और इलाज कराने के लिए किसी अच्छे चिकित्सक की खोज करके उसके पास जाते हैं और चिकित्सक के सांत्वना पूर्ण शब्दों को सुनकर वे राहत की साँस लेते हैं। यह व्यक्ति भी उसी प्रकार का है जो सर्दी जुकाम को बड़ी बीमारी समझ कर उसका इलाज कराने आया है। इसलिए उसे अभी ऐसे ही वैद्य की आवश्यकता है जो उसे सांत्वना भरे दो शब्द भी कह सके। साथ ही उसके अंदर एक विश्वास भी पैदा कर सके कि चिकित्सक ने जो दवा उसे दी है वह उसके लिए गुणकारक व शक्तिवर्धक भी है । रोगी के मनोविज्ञान को जानकर चिकित्सा का निर्णय करते समय वैद्य का व्यावहारिक ज्ञान बड़ा उपयोगी सिद्ध होता है, न कि शास्त्रीय ज्ञान । इसलिए नीलकंठ की तुलना में आयुर्वेद का शास्त्रीय ज्ञान रखने वाले तुम अपने व्यावहारिक ज्ञान के अभाव में अपने पेशे में कितने ज़्यादा पिछड़ गए ।"

गुरु द्वारा उदाहरण देकर समझाने के बाद अनंत को अपनी कमियों के बारे में स्पष्ट ज्ञान प्राप्त हुआ ।

इसके बाद वे दोनों मिलकर घर में प्रवेश करके नीलकंठ से मिले। इस प्रकार तीनों ने एक दूसरे से मिलकर ढेर सारी बातें कीं और बड़े खुश हुए। इसके बाद विश्वपति एक एक दिन अपने दोनों शिष्यों के घर बिताकर उन का आतिथ्य ग्रहण करके खुशी खुशी अपने गाँव लौट आया।

इस घटना के कुछ दिनों बाद विश्वपति ने स्वर्णपुरी से सुमेरुपुर आने जाने वालों से पूछ-ताछ की तो पता लगा कि अब नीलकंठ की तरह अनन्त ने भी अपनी पहचान एक प्रसिद्ध एवं लोकप्रिय वैद्य के रूप में बना ली है। यह सुनकर विश्वपति खुशी से फूला न समाया ।

धनुष तोड़कर कृष्ण-बलराम शस्त्रागार से चुपके से खिसक तो गये, मगर जब वहाँ के भटों ने टूटा धनुष देखा तो उनके छक्के छूट गये। थोड़ी ही देर में वहाँ कोलाहल सा मच गया। मगर कुछ मुस्तैद राजभटों ने कोलाहल पर काबू पाया। जहाँ कोलाहल शुरू हो रहा था वहाँ के लोगों को उन्होंने कुछ बहाना बनाकर पहले शस्त्रागार से बाहर निकाला। और बाद में शस्त्रागार के बाकी हिस्से भी उन्होंने बड़ी चतुराई से खाली करवाये; शस्त्रागार का प्रमुख दरवाजा बंद करवाया और तब धनुष टूटने की खबर कंस को देने के लिए कुछ राजभट राजमहल की ओर रवाना हुए।

शस्त्रागार के भटों ने प्रवेश कर कंस को सूचित किया कि उसका धनुष टूट गया है, तब कंस को ऐसा अनुभव हुआ—मानो उसकी रीढ़ ही टूट गयी है। वह एकदम गहरी चिन्ता में डूब गया और उत्सव का प्रबंध स्वयं देखने चल पड़ा। एक सुंदर मंच का आयोजन करके राजा, मंत्री, बाहर से आये हुए राजा, राजा के रिश्तेदार, अधिकारी, प्रतिष्ठित नागरिक तथा विलासिनियाँ - इन सब के लिये उसपर उचित आसन बनाये गये थे और आसनों पर चढ़ने के लिए विविध सोपान् बिठाये गये थे। सर्वत्र नयनाभिराम शिल्प, पर्दे व तोरण अलंकृत किये गये थे। यथास्थान अलंकार, धूप और पुष्प व्यवस्थित रूप में सजाये गये थे। इन सब का निरीक्षण करके और कर्मचारियों को आवश्यक सूचनाएँ देकर कंस अपने महल में लौट आया। इसके बाद चाणूर और मुष्टिक नामक अपने दो मल्लयोद्धाओं को
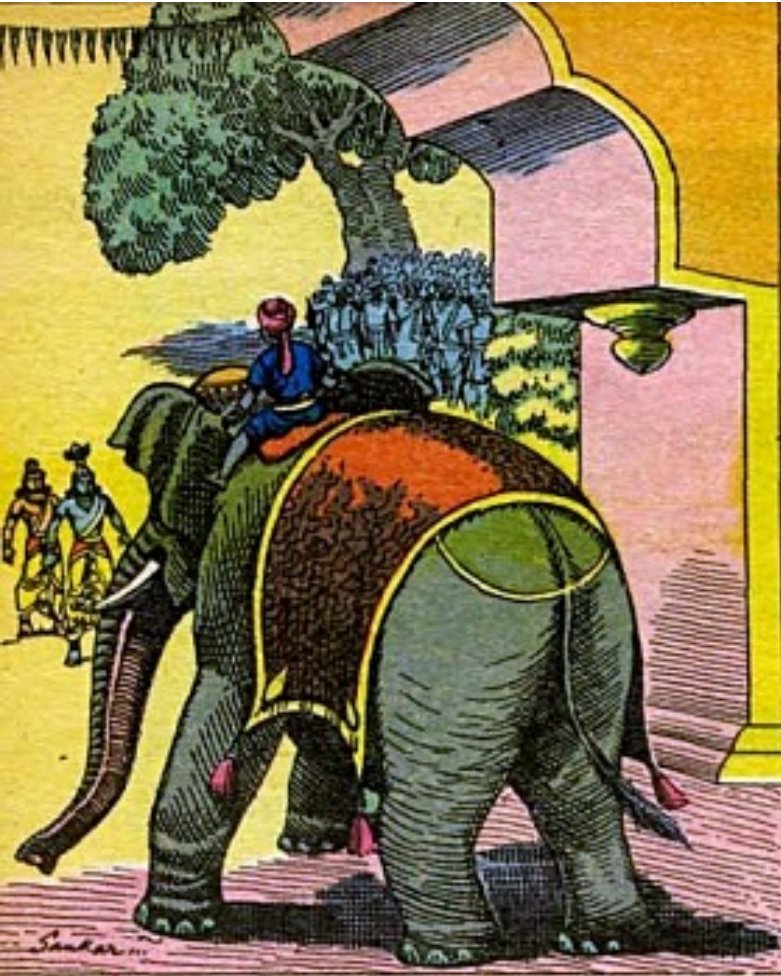
बुलाकर उसने समझाया, "सुनो, मल्लयुद्ध में तुम दोनों का सानी इस दुनियाभर में कोई भी नहीं है। बलराम और कृष्ण नाम के दो लड़के हैं, जो आज तक केवल वनों में ही भटकते रहे। उनमें साहस, पराक्रम और शौर्य नाममात्र भी नहीं है। जब वे तुम से सामना करने आयेंगे, तब तुम उन के साथ ज़्यादा देर तक जूझो मत। एक ही पेंच में अगर तुम उनका काम तमाम कर दोगे तो मुझे बड़ी ही प्रसन्नता होगी।"

राजा की बात सुनकर दोनों मल्ल बड़ी प्रसन्नतासे बोले, "प्रभु, हमें विस्तार से बताने की ज़रूरत नहीं है। सामने आते ही हम उन दोनों लड़कों को मसल डालेंगे। हमारे लिये क्या यह कोई बड़ा काम है?" यह कहकर उन मल्लयोद्धाओं ने ज़ोर से अपने ताल ठोंके और फिर हुँकार भरते हुए अपने निवास को लौट पड़े।

इतना करने पर भी कंस को किसी प्रकार चैन नहीं आ रहा था। उस को चाणूर और मुष्टिक की ताकत पर पूरा भरोसा था। फिर भी अब उसे शकट, केशी वगैरह की याद आयी। कृष्ण-बलराम से अगर चाणूर मुष्टिक ने मात खायी तो? वैसे शकट-केशी पर भी तो उसको पूरा भरोसा था। अब वह सोचने लगा कि चाणूर मुष्टिक से अगर बात न बनी तो और एक बाण तैयार रखना चाहिए। और अचानक उसे याद आयी महाकाय हाथी कुवलयापीड की!

इसके उपरान्त कंस ने महामात्रु नामक एक महावत को बुलाकर समझाया, "तुम मेरे अत्यंत निकट मित्र हो। तुम से इस वक्त एक ख़ास काम लेना है। वसुदेव के पुत्र अत्यन्त दुष्ट हैं लेकिन बलवान भी हैं। इस समय वे हमारे नगर में पधारे हुए हैं। तुम कल सब से पहले ब्रह्ममूहूर्त में ही कुवलयापीड़ हाथी के साथ राजमहल के द्वार पर तैयार रहो। ज्यों ही वे दोनों द्वार के पास आने लगेंगे तो कुवलयपीड़ को उनपर उकसा दो। कुवलयापीड़ उनकी हड्डी-पसली तोड़ देगा।"

कंस के पास बहुत से बड़े बड़े हाथी थे। मगर उनमें कुवलयापीड नाम का हाथी ज्यादा ही विशालकाय था। उसकी सूरत भी बड़ी डरावनी थी। उसकी सूँड और दाँत विकराल थे। उसकी चिंघाड से सारा पीलखाना कँपकपा उठता था। महामात्रु कुशल महावत था। कुवलयापीड़ को

वह बड़ी सहजता से काबू में रखता था। महामात्रु अब कुवलयापीड की सेवा में लग गया। उसने कुवलयापीड़ को इसलिए मद्य भी पिलाया कि सबेरे वह पूरे ज़ोर से कृष्ण पर टूट पड़ सके।

राजा के आदेश के अनुसार दूसरे दिन प्रातःकाल सब लोग सभास्थान पर आकर अपने अपने स्थान पर बैठ गये। वे सब बड़ी ही उत्सुकता से बलराम और कृष्ण के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। कंस एक ऊँचे सुवर्ण आसन पर विराजमान था। उसने श्वेतछत्र तथा मोतियों के आभूषण धारण किये थे। श्वेतछत्र तथा श्वेतछत्रधारिणी विलासिनियों द्वारा चँवर डुलवाते हुए वह चंद्रमा जैसा शोभित हो रहा था।

चाणूर और मुष्टिक मत्त हाथियों की भाँति रंगस्थल पर प्रवेश करके कंस के सामने खड़े हो गये। महामात्रु भी कुवलयापीड़ पर सवार हो आ पहुँचा और द्वार के समीप हाथी को रोककर बलराम और कृष्ण की प्रतीक्षा करने लगा।

थोड़ी ही देर में कृष्ण और बलराम द्वार के समीप आ पहुँचे। सभा में उपस्थित सब लोगों ने उनकी ओर अत्यन्त आश्चर्य के साथ देखा। वे दोनों अत्यन्त निश्चिन्त और निश्चल दिखाई दे रहे थे। द्वार के समीप उन को देखते ही वाद्यवृन्द के नाद और प्रेक्षकों की हर्षध्वनियाँ आकाश में प्रतिध्वनित हो उठीं। उस कोलाहल के बीच महामात्रु ने कुवलयापीड़ को उनपर उकसाया।

यह देखकर बलराम की ओर देख मन्दहास करते हुए कृष्ण बोला, "भैया देखो, कंस ने हमारा संहार करने के लिये एक मत्त हाथी को तैयार कर रखा है। बेचारा यह भी नहीं जानता
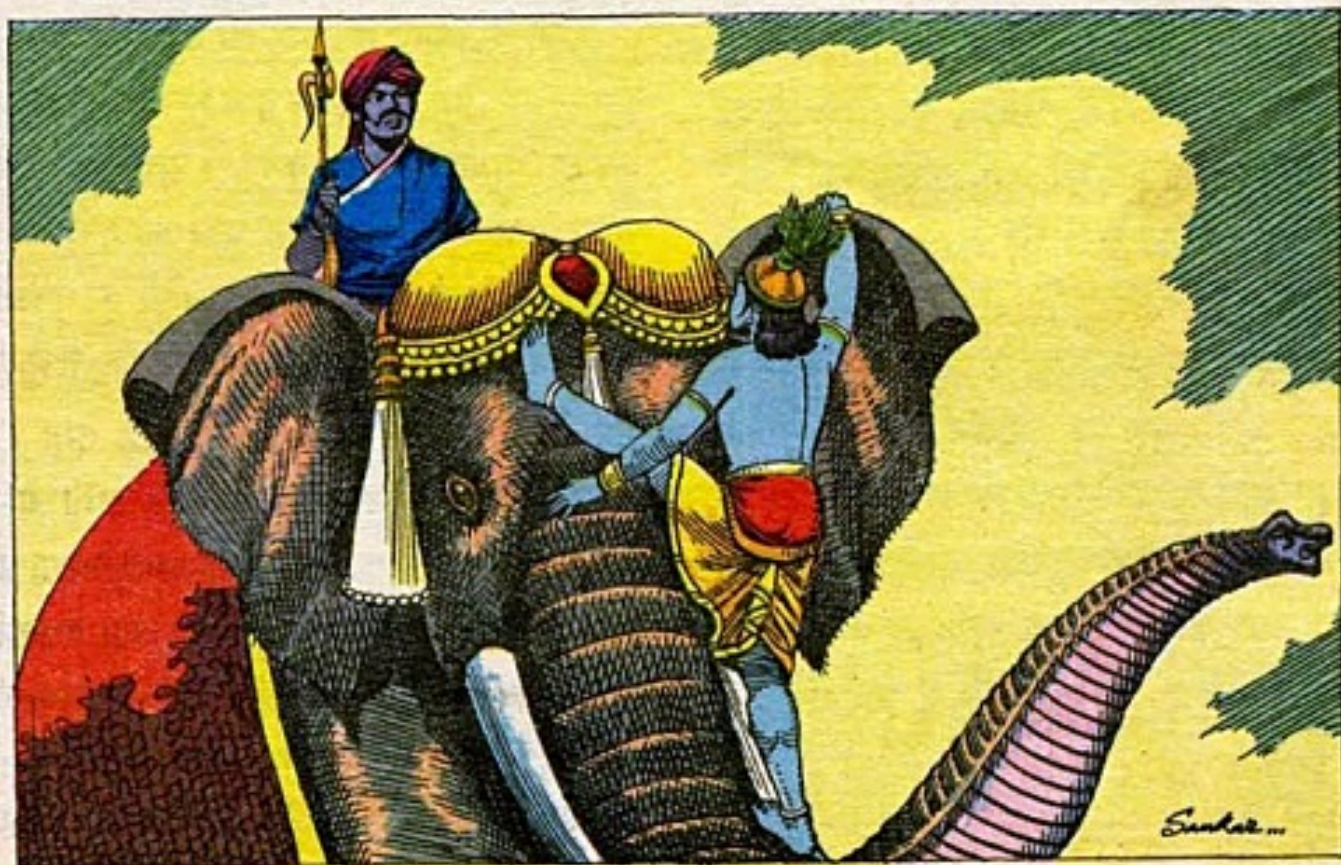
कि वह खुद मौत के जबड़े में फँसा हुआ है। तुम मुझे सावधानी से देखते रहो।" इतना कहकर कृष्ण आगे बढ़ा।

विशाल दन्तवाले, भयंकर सूँड को उठाकर पृथ्वी को कंपा देते हुए आगे कदम बढाने वाले उस रौद्र रूपधारी हाथी को महामात्रु ने और आगे बढ़ाया।

कृष्ण ने कुवलयापीड़ के साथ युद्ध करने के बहाने अपने बल का प्रदर्शन और लोगों का थोड़ा मनोरंजन करने के बहाने प्रारम्भ में हाथी को अपने वक्ष पर सूँड़ से प्रहार करने दिया। इसके बाद उछलकर वह उसके दाँतों पर पैर रखकर खड़ा हो गया। अपने बायें पैर से उसने हाथी के कुम्भस्थल पर लात मार दी और फिर उसकी पीठ पर जा बैठा। हाथी ने अपनी सूँड़ पीछे की ओर फैला दी तब उसे पकड़कर कृष्ण ज़मीनपर कूद पड़ा। उसने अपनी मुठ्ठियाँ कसकर हाथी की बगल में प्रहार किये। इसपर हाथी पीछे मुड़ा, तब कृष्ण उसके पैरों के नीचे से पीछे गया और उस की पूँछ पकड़कर उसने हाथी को गोल चक्कर घुमाया। हाथी नीचे गिर पड़ा, मगर उसने झट उठकर अत्यंत क्रोध में आकर सूँड़ से कृष्ण पर प्रहार किया, दाँतों से उसे चुभोया। अब कृष्ण ने हाथी का संहार करने का निश्चय किया और उछलकर उसके चेहरेपर लत्ताप्रहार किया। फिर ज़बरदस्ती उसका एक दाँत उखाडकर उसीसे हाथी का सिर फोड़ने लगा। शीघ्र ही धराशायी हो कुवलयापीड़ ने दम तोड़ दिया। इसके बाद नीचे गिरे हुए महावत का भी उसी दाँत से सिर फोड़कर, उसको भी मार डाला।

हाथी के हमले से कृष्ण की देह से खून बह उठा। उसी स्थिति में अपने हाथ में वह दाँत लिये अत्यन्त भयंकराकृति में कृष्ण ने सभा-भवन में प्रवेश किया। कृष्ण को देख कंस क्रोध से काँप उठा; फिर उसने चाणूर को युद्ध करने का संकेत किया। इसी प्रकार मुष्टिक को भी बलराम से युद्ध करने को उसने उकसाया।

चाणूर और मुष्टिक आंध्र के निवासी थे। उन्हें देखकर ही मत्त गजों की याद आती थी। उन्हें इस बात का बड़ा अभिमान था कि दुनिया में कोई भी उन्हें पराजित करने की हस्ति नहीं रखता था। चाणूर कृष्ण के पास जाकर व्यंग्य भरे क्रोध से बोला, "तुमने गायें चरानेवाले बच्चों को डराकर

बड़ी ख्याति अर्जित की है। लेकिन आज तुम मेरे सामने हो, मेरे हाथ से बच नहीं सकोगे। महाराजा की प्रशंसा पाने योग्य रीति से मैं अभी तुम को काल किंकरों के हाथों में समर्पित कर देता हूँ।"

कृष्ण बड़ी सब्र से बोला, "बेचारा कंस तुमपर बड़ी बड़ी आशाएँ लेकर बैठा है; इसलिये तुम अपनी सारी शक्ति का, अपने सारे कौशल्य का भरपूर प्रयोग करो। बेकार बातें बनाने से क्या फायदा ?" यह कहकर कृष्णने ताल ठोंके।

इसपर चाणूर कृष्ण से जूझ पड़ा। सभा में उपस्थित सभी यादव कृष्ण को लेकर बहुत चिन्तित हुए। वे आपस में विचार विनिमय करने लगे—"पर्वत जैसे चाणूर और बालक कृष्ण के बीच मल्लयुद्ध कैसा ? यह तो घोर अन्याय है। यहाँ जो बुज़ुर्ग बैठे हैं, क्या उनकी बुद्धि कुण्ठित हो गयी है ? और यह मल्लयुद्ध का सही तरीका भी नहीं है। मल्लयुद्ध के समय योद्धाओं के सहायक उनके साथ रहकर थकावट के समय उनका उपचार करते हैं। कुशलता और हबीपन के बीच फरक तो परखना होगा। अब ज़रूरत महसूस होने पर बुज़ुर्गों को युद्ध रोक देना चाहिये। यह तो मनोरंजन का कार्यक्रम है, शत्रुओं के बीच युद्ध तो नहीं। जो कुछ अब तक हुआ, बस ज़्यादा ही है। अब राजा के द्वारा दोनों को बुलाकर युद्ध रुकवाकर उचित रूप में उनका सत्कार करना उत्तम होगा।"

ये बातें सुनकर कृष्ण उन से बोला, "मुझे इसी प्रकार लड़ने दीजिये। मनोबल, पराक्रम, सहनशीलता, उत्साह तथा विजय का प्रदर्शन करनेवाले योद्धा के लिये लंबाई, मोटापन तथा उमर से क्या मतलब है ? मैं उसका वध करने का विचार रखता हूँ। आप लोगों को मैं प्रसन्न करूँगा। आप चुपचाप सब देखते रहिये। यह चाणूर करूर देश का निवासी है, अनेक मल्ल-योद्धाओं का इसने संहार किया है। इसलिये मैं इसका वध करके यश का भागी बन जाऊँगा।" यह कहकर कृष्ण ने चाणूर के साथ युद्ध प्रारंभ किया।

उस युद्ध में मल्लयुद्ध प्रवीण चाणूर से बढ़कर कृष्णने ही अधिक कुशलता दिखाई दोनों एक दूसरे को झुकाते, उछलते, ढकेलते,

उसके सिरपर ज़ोर से अपनी मुट्ठि का प्रहार किया, फिर एक बार उछलकर अपने घुटने से उसके वक्ष पर मार दिया । इसपर चाणूर की आँखें निकल आयीं । रक्त उगलते हुए वह गिर पड़ा और उसके प्राणपखेरू उड़ गये ।

इस बीच बलराम ने भी मुष्टिक का वध कर डाला । दोनों मल्लयोद्धाओं का अन्त करके बलराम और कृष्ण विजयी होकर रंगस्थल पर खड़े हो गये । उन दोनों ने कंस की ओर जो दृष्टि प्रसारित की और कंस के चेहरे पर जो क्रूरता नाच उठी, उसे देख नंद आदि गोप भयकंपित एवं आतंकित हो मौन रह गये ।

देवकी ने आँठवीं बार जिस पुत्र को जन्म देकर गोकुल भेज दिया था, वह चाणूर के हाथों कहीं प्राण खो बैठे, इस भय से देवकी देवी तड़पती रही । उसका मन इस विचार से व्याकुल था, कि लम्बे अरसे के बाद एक ही बार दर्शन देकर थोड़ी ही देर बाद अपने प्राणों से वंचित हो जाएगा । मगर चाणूर का संहार करनेवाले अपने पुत्र के शौर्य की वार्ता सुन उसकी आँखों से अब आनन्दाश्रु झरने लगे । वसुदेव की प्रसन्नता की भी कोई सीमा न रही ।

मगर इधर कंस के चेहरे पर से पसीना छूटने लगा । असहनीय क्रोध के मारे उसका शरीर काँपने लगा । वह गहरी साँसें भरने लगा । उसकी आँखों से अंगार बरसने लगा । उसने एक बार चारों तरफ़ दृष्टि दौड़ायी । फिर अपने सेवकों को बुलाकर आदेश दिया—"इन दोनों लड़कों को

झुकते, दबते, पार्श्व की ओर हटते देर तक अद्भुत रीति से युद्ध करते रहे । पीठों व सिरों की टकराहट तथा मुष्टिघातों के समय बड़ी ध्वनियाँ हुआ करती थीं । एक दूसरे को हाथों, पावों से मारते, दाँतों व नाखूनों से खरोंचते लड़नेवाले वे दृश्य दर्शकों को भयंकर प्रतीत हो रहे थे ।

मगर सब प्रकार के दाँव-पेचों में कृष्ण की कुशलता ही सराहनीय रही । इसपर दर्शकों को हर्ष-नाद करते देख क्रुद्ध होकर कंस ने अपने हाथ का इस प्रकार संकेत किया, कि मानो उसका अर्थ था—'हर्षनाद रोक दो ।' कृष्ण ने थोड़ी देर अपने प्रतिभा का इस प्रकार परिचय देने के बाद चाणूर का अंत करने का निश्चय किया । चाणूर भी युद्ध करते थक कर शिथिल हो चुका था; दुर्बल हो गया था । उस हालत में कृष्ण ने उछलकर

Sankar

ले जाकर नगर के बाहर छोड़ आओ। नंदगोप को हथकड़ियाँ और बेड़ियाँ पहनकर बन्दी बना लो; और बाकी गोपकों का शिरच्छेद कर डालो। मेरे राज्य में जहाँ कहीं गोपक दिखाई दें, उसे पकड़कर ऐसा दण्ड दो, जैसे चोर डाकुओं को दिया जाता है। उनकी सारी संपत्ति लूटकर ख़ज़ाने में भर्ती कर लो। वसुदेव को भी कठिन दण्ड दो।"

वह हुक्म सुनकर सब के चेहरे पीले पड़ गये। पुनः शोकग्रस्त हो देवकी बेहोश हो गयी।

कृष्ण भी अपने माता-पिता की दीन स्थिति, बन्धु-मित्रों की व्यथा, तथा सभासदों की असहाय दशा देखकर क्रोधावेश में आ गया। विद्युत्गति से वह सीढ़ियाँ चढ़कर सिंहासन पर आरूढ कंस के पास जा पहुँचा। सभासदों को कृष्ण सीढ़ियाँ पार करते हुए दिखाई नहीं दिया! अभी एक क्षण पूर्व वह रंगस्थल में था और अभी दूसरे क्षण वह कंसके सिंहासन के निकट था!

कृष्ण ने कंस के मुकुट पर इतने ज़ोर से लात मारी कि, उस में जटित मणि बिखर गये। फिर उसने कंस का जूड़ा पकड़ उसका सिर झुका दिया। उस के सिरपर मुष्टि प्रहार किये। वक्षपर घुटनों से प्रहार किया। कंस कुछ भी नहीं कर पाया। उसके कंठहार कट गये, कर्ण-कुण्डल टूटकर गिर पड़े और वस्त्र खुल गये! उसके नाक, कान, मुँह से खून बहने लगा, आँखें निकल आयीं। इसके बाद कृष्ण ने उसको ऊपर से नीचे गिराया। ज़ोर से धकेलने के कारण कंस का शरीर पलटियाँ खाते हुए रंगद्वार की परिखा में जा गिरा।

इस बीच बलराम ने कंस के छोटे भाई सुनाम पर सिंह की भाँति आक्रमण करके उसका वध कर डाला।

कृष्ण ने जिन हाथों से कंस का वध किया, उन्हीं हाथों से उसने वसुदेव के चरण छूकर प्रणाम किया। वसुदेव ने कृष्ण को दृढ आलिंगन करने आशीर्वाद दिया। इस के बाद कृष्ण को अपने आलिंगन में लेकर उसका माथा सूँघ लिया।

बाद में कृष्ण ने उग्रसेन व अन्य बुजुर्गों को प्रणाम करके उनके आशीर्वाद लिये और सब को वहाँ से भेजकर कृष्ण अपने भैया बलराम को साथ लेकर अपने पिताके घर चला गया।

धोखेबाज

किसी ज़माने में दो मित्र थे। वे दोनों बड़े ही चालाक और धोखे़बाज़ थे। एक का नाम था वक्रबुद्धि और दूसरे का दुर्बुद्धि। वे दोनों देशाटन करते हुए एक दिन एक गाँव में पहुँचे। वहाँ गाँव के सिरे पर एक खेत में एक बैल दिखाई दिया। वे उस बैल को हाँक कर ले गये और गाँव के किसी दूसरे स्थान पर बाँधकर गाँव की सराय को लौट आये। इसके बाद वक्रबुद्धि सराय में ही ठहर गया और दुर्बुद्धि गाँव में चला गया।

इस बीच बैल के मालिक को पता चला कि, उसका बैल खो गया है। वह यह ख़बर सारे गाँव वालों को सुनाने लगा। वहाँ एक छोटी सी भीड़ इकट्ठा हो गयी। लोग परस्पर भी कहने लगे—"अमुक आदमी का बैल खो गया है।" छोटे गाँवों में ऐसी बातें फैलने में देर नहीं लगती।

दुर्बुद्धि उस भीड़ के पास जाकर बोला, "तुम लोग किसी चीज़ के खोने की बात कर रहे हो; मेरे गुरुजी बहुत ही विख्यात ज्योतिषाचार्य हैं। वे इसी गाँव के सराय में ठहरे हुए हैं। उन से मिल लो तो वे खोई हुई चीज़ के बारे में बता सकते हैं।

जिसका बैल खोया था, वह आदमी कुछ गाँववालों को लेकर दुर्बुद्धि के साथ सराय में पहुँचा।

वक्रबुद्धि ने सारा वृत्तान्त सुनकर पेटी में से ताड़पत्रवाला ग्रंथ निकाला। यत्र-तत्र पढ़कर थोड़ी देर के लिये आखें मूँद ली। फिर सोचने का अभिनय करके बोला, "इस सराय की उत्तरी दिशा में एक बहुत बड़ा वट वृक्ष है। वहाँ से पूर्वी दिशा में जानेपर एक इमली का ऊँचा पेड़ दिखाई देगा। वहाँ से बायीं ओर देखने से एक छोटा सा आम का पेड़ दिखाई देगा। उसी प्रदेश में तुम्हारा बैल कहीं बंधा हुआ मिलेगा।"

इसके बार उस आसामी के साथ दुर्बुद्धि और

बर्मा की लोककथा

ज्योतिषाचार्य के पास निवेदन था कि, वे उस पानदान को मुखिया को वापस दिलवाने में मदद करें ।

यह समाचार सुनकर वक्रबुद्धि पलभर के लिए चकित रह गया । लेकिन वह धोखा देने में माहिर था, इसलिए अपने आप को बचाने के ख्याल से झट बोल पड़ा, "यह वर्ज्य का समय है । इस वक्त मैं कुछ नहीं कह सकता । कल सुबह आ जाओ । मैं चोर का हुलिया ठीक ठीक बता दूँगा ।"

"जी हुजूर, जैसी आज्ञा । कल सूर्योदय के समय मैं पुनः आप के दर्शन करूँगा ।" यह कहकर मुखिया वहाँ से चला गया ।

"हमें शीघ्र यहाँ से भाग जाना उचित होगा ।" दुर्बुद्धि ने सुझाया ।

"अर्धरात्रि के बाद हम यहाँ से भाग निकलेंगे ।" वक्रबुद्धि ने हामी भर दी ।

इस बीच गाँव के मुखिया ने घर लौटकर सब को बताया कि, "ज्योतिषाचार्य ने चोर पकडवा देने का वचन दिया है । उन के लिए कोई भी बात असंभव नहीं है । समझ लो कि मेरा पानदान मुझे वापस मिल ही गया है ।"

मुखिया के अनुचरों में प्रारब्ध नाम का एक व्यक्ति था, उसी ने वह पानदान चुराया था । ज्योतिषाचार्य का नाम सुनते ही उसका कलेजा काँप उठा । उसी रात को वह सराय की ओर गया, धोखेबाज़ों के कमरे समीप जाकर भीतर का वार्तालाप सुनने लगा ।

कुछ लोग चल पड़े । वक्रबुद्धि ने जो स्थान बताया था, वहीं पर बैल पाया गया । गुरुजी के लिए दक्षिणा बताकर दुर्बुद्धि ने बैल वाले उस आसामी से दस रुपये वसूल किये ।

इस प्रकार उन धोखेबाजों को अच्छा फायदा हुआ । इसके बाद वे उस गाँव को छोड़कर जाने ही वाले थे, कि गाँव का मुखिया उन की खोज में वहाँ आ धमका । "अजि सुनिये, मैं आप लोगों से ही मिलने आया हूँ । लगता है, आप यात्रा की तैयारी में हैं । अच्छा हुआ, मैं वक्त पर पहुँचा, और थेड़ी देर होती तो मेरी क्या होती!" इन शब्दों के साथ उसने अपने आगमन का कारण बताया । बात यह थी कि, उस मुखिया के घर से किसीने उसका सोने का पानदान चुराया था । उसका

"सुनो भाई, हमें तो बैल का पता लगते ही भाग जाना चाहिए था। अंधेरे में चोरों की भाँति भाग निकलना मुझे कतई पसन्द नहीं।" वक्रबुद्धि बोला।

"इस में मेरा क्या दोष? मुझे थोड़े ही मालूम था कि चोरीवाली यह आफ़त गले पड़ेगी? यह तो प्रारब्ध है।" दुर्बुद्धि बोला।

"ओह, प्रारब्ध ही तो है।" वक्रबुद्धि ने बात दोहरायी।

चोरी चोरी सुनने वाले प्रारब्ध ने उनके संवाद का आख़री हिस्सा ही सुना। अपना नाम सुनते ही उस का दिल काँप उठा। तुरन्त कमरे में घुसकर धोख़ेबाज़ों के पाँव पकड़कर वह बोला, "हुजूर, मुझे बचाइये। मैं ही वह प्रारब्ध हूँ। चोरी के अपराध में मुखिया मेरी चमड़ी उधेड़ देगा। मैं आप को बता देता हूँ कि मैंने वह सोने का पानदान कहाँ रखा है। मगर मेरी जान बचाइये।"

"ठीक है। बताओ, पानदान कहाँ छिपा रखा है तुमने?" वक्रबुद्धि ने डाँटकर उसे पूछा।

वक्रबुद्धि को पानदान की जगह बताकर प्रारब्ध वहाँ से खिसक गया।

गाँव का मुखिया दूसरे दिन सूर्योदय के समय इन दोनों के पास पहुँचा।

"श्मशान के मण्डप की सीढियों के नीचे पानदान छिपाकर रखा गया है। आप लोग शीघ्र ही जाकर अपनी वस्तु ले आइये।" वक्रबुद्धि ने मुखिया से कहा।

मुखिया ने श्मशान जाकर वहाँ की सीढियों के नीचे खोद कर देखा; उसे अपना पानदान मिल गया। फिर क्या था! वह बहुत ही खुश हुआ और उस ने ज्योतिषाचार्य को न केवल एक सौ रूपये का पुरस्कार दिया, बल्कि उसको और उसके शिष्य को अपने घर दावत के लिए भी निमंत्रण दिया। दोनों धोखेबाज़ जब दावत खा रहे थे, तभी राजा के यहाँ से एक दूत ने आकर मुखिये को एक ज़रूरी समाचार सुनाया।

वह समाचार था—तीन दिन पूर्व राजधानी के तटीय बंदरगाह में सात व्यापारी जहाज़ आये। उनमें अत्यंत कीमती माल था। जहाज़ों के व्यापारी ने राजा से एक दाँव लगाया। दाँव की शर्त थी—व्यापारी एक लोहे का बक्सा राजा को सौंप देगा। एक सप्ताह के अन्दर राजा को यह

बताना होगा कि उस बक्से में क्या क्या चीज़ें रखी गयी हैं। यदि राजा सही उत्तर दे पाया तो व्यापारी अपने सभी जहाज़ माल के साथ राजा को सौंप देगा; और अगर राजा हार जाये तो उसको अपना पूरा राज्य व्यापारी को सौंपना होगा।

राजा के दरबार में कुछ ज्योतिषी थे। उनकी विद्यापर राजा को बड़ा नाज़ था। और साथ ही राजा के मन में जहाज़ों के माल के प्रति लालच था; इसलिए राजा ने व्यापारी की शर्त मान ली। मगर दरबारी ज्योतिषियों ने नकार में गर्दन हिलाकर साफ़ कह दिया कि वे उस लोहे के बक्से के भीतर की चीज़ें बताने में सर्वथा असमर्थ हैं। इस प्रयत्न में तीन दिन ऐसे ही गुज़र गये। अब बाकी चार दिनों के अन्दर दाँव न जीता तो राजा राज्यच्युत हो जायेगा। राजा अब बहुत ही व्याकुल हो उठा और उसने राज्य के सभी ग्रामाधिकारियों को खबर भेज दी कि, जहाँ भी जो भी ज्योतिषी हो उस को तुरन्त राजधानी भेजा जाय।

गाँव का मुखिया वक्रबुद्धि से बोला, "आप जैसे ज्योतिषाचार्यों के होते हमारे राजा को डर किस बात का? आप और आपका शिष्य तुरन्त मेरे साथ चलिये।

लाचार होकर धोखेबाज़ों को राजा के पास जाना पड़ा। वहाँ उनका राजोचित स्वागत हुआ।

निश्चित अवधि का अंतिम दिन आ पहुँचा। दूसरे दिन सबेरे लोहे के बक्से के भीतर की चीज़ों के बारे में न बताने पर राजा अपने राज्य से वंचित हो जाएगा। यदि धोखेबाज़ राजा को वह बता न सकेंगे तो उन के सिर काट दिये जाएँगे।

दुर्बुद्धिने वक्रबुद्धि से पूछा, "क्या हम आज रात यहाँ से भाग जायें?"

"हम कहाँ तक भाग सकते हैं? राजा अवश्य हम को पकडवाएगा। हमें अत्यन्त अपमान जनक मृत्यु प्राप्त होगी। इस से अच्छा यह होगा कि, हम समुद्र में कूदकर तैरते हुए आगे आगे चले जाएँ, तो चुपके से मर सकेंगे।" वक्रबुद्धि ने सुझाया।

आधी रात गये दोनों धोखेबाज़ समुद्र के किनारे पहुँचे और पानी में उतरकर आगे आगे तैरत रहे। थोड़ी दूर उन्हें कुछ जहाज़ दिखाई दिये। एक जहाज़ में कुछ वार्तालाप चल रहा था

"दादाजी, बताओ न, उस बक्से में क्या है?" एक लड़की पूछ रही थी ।

"बेटी, तुम्हें इस से क्या? रात हो गयी है, जाकर चुपके से सो जा ।" बूढ़ा दादा लड़की से कह रहा था ।

"उस बक्से में क्या है यह बतानेपर ही मैं सो जाऊँगी । नहीं तो बिलकुल नहीं सोऊँगी ।" लड़की ने ज़िद पकड़ ली ।

"सबेरा होने से किसी तरह इसका पता तो लग ही जाएगा । जानती हो इसके अंदर क्या है? लोहे के बक्से के अंदर एक पीतल का बक्सा है; पीतल के बक्से में एक चाँदी का बक्सा है । चांदी की उस पेटी में एक सोने की पेटी है और उसमें इत्र की शीशी है । बस, अब तुम जाकर सो जाओ ।" दादा बोला । यह बूढा दादा व्यापारी का प्रमुख मल्लाह था ।

यह वार्ता मिलते ही धोखेबाज़ चुपचाप तैरते हुए पीछे लौट आये और सबेरा होते ही उन्होंने राजा को लोहे के बक्से का रहस्य बता दिया ।

फिर क्या था, व्यापारी ने अपने सारे जहाज़ राजा को सौंप दिये !

राजा ने वक्रबुद्धि को अपने दरबारी ज्योतिषियों का प्रमुख नियुक्त किया । मगर धोखेबाज़ों को यह पद कदापि पसन्द नहीं था; क्यों कि कभी न कभी उनकी पोल खुल सकती थी । इससे वे बचना चाहते थे ।

उस दिन संध्या समय वक्रबुद्धि राजमहल में राजा से वार्तालाप कर रहा था; तभी दुर्बुद्धि रोते-चिल्लाते वहाँ आ पहुँचा और कहने लगा, "गुरुदेव, हमारा सत्यानाश हो गया; हमारा निवास जल गया है और उस में हमारे सारे ज्योतिष-ग्रंथ भस्मसात् हो गये ।" यह कहते हुए अपने छालों से भरे हाथ उसने दिखाये ।

"उफ! अब तो हमारा ज़िन्दगी का सहारा ही टूट गया ।" कहते हुए वक्रबुद्धि ने भी रोनी सूरत बनायी ।

"आप लोग चिन्ता न करें । मैं आप को अपने दरबार में अच्छा स्थान दूँगा ।" राजा ने समझाया

आख़िर धोखेबाज़ों की चाल सफल हो गयी । वे राजा के दरबार में बड़े आराम से अपना शेष जीवन बिताने लगे ।

राजा की परीक्षा

महातल देश पर राजा सिंहकेतु का शासन था। उसका सेनापति वीरवर्मा था। साहस और पराक्रम तथा युद्धतंत्र में वीरवर्मा विशेष निपुण था। जब वृद्धावस्था प्राप्त हुई तब उसने सेनापति पद से अवकाश ग्रहण कर विश्राम करना चाहा।

एक दिन इस संबंध में खूब सोच-विचार करके राजा से मिलने गया। मंत्री भी उस समय राजा के पास ही था।

वीरवर्मा ने जब अपनी इच्छा प्रकट की तब राजा ने अनिच्छापूर्वक कहा, "तुम्हारा सेनापति पद से अवकाश ग्रहण करना मुझे कतई पसन्द नहीं। फिर भी मैं तुम्हारी इच्छा का अवमान नहीं कर सकता। एक काम करो—तुम्हारे दोनों पुत्र पिछले कुछ वर्षों से तुम्हारे साथ साथ रहते तुम्हारी ही तरह सामर्थ्यवान् बन गये हैं। उन में से एक को तुम ही इस पद के लिए चुन लो।"

राजा की बात सुनकर वीरवर्मा थोड़ी देर के लिए मौन हो गया; फिर बोला, "महाराज, यह सच है कि, मेरे पुत्र शूरवर्मा और जयसिंह मेरे अनन्तर सेनापति-पद संभालने योग्य हैं। पर मेरी दृष्टि में दोनों समान ही हैं। इसलिए इसका निर्णय आप की करें तो ज़्यादा उचित रहेगा।

राजा ने भी सेनापति की बात मान ली। अब राजा सिंहकेतु ने शूरवर्मा और जयसिंह दोनों को निकट बुलाकर कहा, "तुम दोनों जानते ही हो, कि, राजपद की भाँति सेनापति-पद पैतृक नहीं होता। लेकिन मैं इस बात को अच्छी तरह जानता हूँ कि शौर्य पराक्रम और युद्ध कला में तुम दोनों अपने पिता जितने ही कुशल हो। इस वक्त मैं तुम्हारी एक परीक्षा लेने जा रहा हूँ। इस परीक्षा के द्वारा यह विदित होगा कि तुम दोनों में कौन अधिक ज्ञान-विज्ञान तथा व्यावहारिक ज्ञान रखता है।"

दमयन्ती श्रीवास्तव

राजा की बात सुनकर शूरवर्मा बोल उठा, "महाराज, युद्धकाल के सभी क्षेत्रों में हम दोनों भाई समान रूप में काबिल हैं, यह बात मैं जानता हूँ। मगर सेनापति-पद पाने में मैं खास रुचि नहीं रखता हूँ। आप मुझे दूसरा कोई काम सौंप देने की कृपा करें।"

"अगर हमारा राज्य सेनापति के रूप में तुम्हीं को चाहता है, तो क्या तुम्हारा यह कर्तव्य नहीं है, कि तुम अपनी निजी रुचि या अरुचि को अपने राज्य के लिये त्याग दो ?" राजा सिंहकेतु ने तुरंत उस से पूछा।

"जी हाँ, जरूर, महाराज !" शूरवर्मा ने झट अपनी स्वीकृति दे दी।

"तो फिर परीक्षा के लिये तैयार रहो।" राजा ने कहा।

शूरवर्मा और जयसिंह दोनों परीक्षा देने के लिए स्वीकृति सूचक मंदहास कर उठे।

राजाने उन्हें समझाया, "देखो, सामने दिखाई देनेवाले तीन कमरों में हमने जो चीज़ें सुरक्षित रखी हैं, उनकी जाँच करके तुम्हें बताना होगा कि तुम्हें कौन सी चीज़ ज़्यादा पसन्द है और क्यों।"

एक राजभट प्रवेश करके पहले शूरवर्मा को साथ ले गया और उसे उन कमरों के सामने छोड़कर लौट आया।

शूरवर्मा ने तीनों कमरों से रखी चीज़ों को पूर्ण रूप से परखकर देखा और लौटकर उसने कहा, "महाराज, दूसरे कमरे में रखी युद्ध सामग्री मुझे ज़्यादा पसन्द है।"

राजा और मंत्री मुस्करा उठे।

इसके बाद जयसिंह को राजभट ले गया

जयसिंह भी सभी चीज़ों को परखकर सभा के सम्मुख आकर बोला, "मैं धन के ढेरों को अधिक पसन्द करता हूँ ।"

"ओह, ऐसी बात है? बताओ किस कारण तुम धन-संपत्ति को अधिक पसन्द करते हो?" राजा ने पूछा ।

"महाराज, इस संसार में सब से महत्वपूर्ण वस्तु धन ही तो है । धन के सहारे ही अन्य दो कमरों में सुरक्षित युद्धसामग्री और खाद्यसामग्री को बड़ी सहजता से संग्रहित किया जा सकता है । इसलिए मैं धन के ढेर को ज़्यदा पसन्द करता हूँ ।" जयसिंह ने अत्यन्त गम्भीर स्वर में उत्तर दिया ।

दूसरे ही क्षण जयसिंह के उत्तर से अत्यन्त प्रसन्न होकर सभी उपस्थित सभासद तालियाँ बजाने लगे ।

राजा ने अपने कण्ठ से मोतियों का हार निकाला और उसे जयसिंह के गले में पहनाते हुए कहा, "जयसिंह का लौकिक ज्ञान प्रशंसनीय है । इसलिए मैं इसी को सेनापति-पद के लिए नियुक्त करता हूँ ।"

सभी सभासदों ने इस पर स्वीकृतिसूचक एक बार फिर तालियाँ बजायीं और हर्षनाद किये ।

राजा ने अपने दरबारियों को समझाया, "जयसिंह को सेनापति चुनने का और भी एक कारण है । वैसे शूरवर्मा भी जयसिंह जितना ही काबिल है; मगर शुरू में ही उसने सेनापति-पद ग्रहण करने में अपनी अरुचि प्रकट की थी । मेरे विचार में, अगर कोई किसी काम करने में अपनी अनिच्छा प्रकट करता है, तो उसपर वह काम लादना नहीं चाहिये । सेनापति-पद ग्रहण करनेवाले को चाहिये कि वह युद्ध के लिये हमेशा स्वेच्छा से सन्नद्ध रहे । जिस आदमी में सेनापति बनने की महत्वाकांक्षा नहीं है, ऐसे आदमी को वह पद हरगिज़ नहीं देना चाहिये ।"

सभी दरबारियों को राजा का निर्णय बहुत पसन्द आया । दो समान सुयोग्य भाइयों में से एक को सेनापति चुनने में राजा ने जिस कुशलता का परिचय दिया यह सराहनीय था ।

भगवान साक्षी है

कुन्दनपुर गाँव में गोविन्दराज नाम का एक बहुत बड़ा डाकू रहता था। चोरी करना उस के घराने का पेशा था। गोविन्दराज के बाप-दादा भी डाकू थे। चोरी करना उसके परिवार के लिए कुल-विद्या ही बन गया था।

गोविन्दराज के एक बहन थी। उस के एक पुत्र था। उसका नाम भगवान था। मामा के यहाँ जाकर चोर विद्या सीखने के लिए भगवान की माँ ने उसे गोविन्दराज के पास भेजा।

भगवान जन्मजात डाकू था। इसलिए गोविन्दराज के यहाँ रहकर वह चोर-विद्या में शीघ्र प्रवीण हो गया। वह अपने मामा से भी बढ़कर युक्तिपूर्वक चोरियाँ करने लगा। गोविन्दराज को जब इस बातका एहसास हुआ, तब से वह चोरी करने निकलते वक्त अपने भानजे को भी साथ ले जाने लगा।

एक दिन गोविन्दराज और भगवान दोनों मिलकर उस गाँव में पहुँचते पहुँचते अँधेरा हुआ। उन्हें मालूम हुआ कि उस गाँव का न्यायाधिकारी बड़ा धनवान है। इसलिए दोनों ने निश्चय किया कि आज रात न्यायाधिकारी के ही घर चोरी करेंगे।

न्यायाधिकारी एक सज्जन व्यक्ति था। उसके कोई संतान न थी। इसलिए वे पति-पत्नी सदा जप, उपवास और पूजा-पाठ किया करते थे।

न्यायाधिकारी प्रतिदिन रात को देर से घर लौटता था। यह बात भी गोविन्दराज और भगवान को मालूम हो गयी। अब उन्होंने निश्चय किया कि शीघ्र ही अपना काम समाप्त कर लें। इस विचार से वे दोनों न्यायाधिकारी के घर में घुस गये।

"मुझे तो बड़ी भूख लगी है। मामा,खाने को कहीं कुछ मिल जाय तो ढूँढ लेता हूँ पहले।" भगवान ने कहा।

२५ वर्ष पूर्व चन्दामामा में प्रकाशित कहानी

"मैं छतपर जाकर धन-संपत्ति ले आता हूँ। अगर मैं पहले आया, तो इस पेड़ के नीचे आ जाऊँगा। तुम पहले आ जाओ तो तुम भी इसी पेड़ के नीचे मेरा इंतज़ार करो। दोनों मिलकर ही घर चले जायेंगे।" गोविन्दराज ने कहा।

इसके बाद गोविन्दराज ऊपरी मंजिल पर चला गया। भगवान मकान के भीतर चला गया। प्रवेशद्वार के किवाड़ यूँ ही सटाकर बन्द किये गये थे। भगवान ने भीतर प्रवेश करने पर दरवाज़े पर कुंड़ी चढ़ा दी।

वह बिल्ली की भाँति दबे पाँव रसोई घर तक पहुँचा और भीतर झाँक कर देखा। सारा मकान एकदम निःशब्द था। न्यायाधिकारी की पत्नी रसोईघर में आँचल बिछाकर झपकियाँ ले रही थी। पार्श्व में ही भगवान के आले के पास विभिन्न प्रकार के पदार्थ रखे गये थे। उनकी सुगंध नाक में घुसने पर भगवान को लगा कि जान में जान आ गयी।

दरअसल बात यह थी कि, वह एकादशी का दिन था। न्यायाधिकारी और उसकी पत्नि ने दिनभर उपवास किया था। रात के भोजन के बदले खीर तथा आठ दोसे व चटनी तैयार करके न्यायाधिकारी की पत्नी अपने पति का इन्तज़ार करते ऊँघने लगी। उपवास के कारण उसे ज़रा कमज़ोरी महसूस हो रही थी, इसलिए उसे जल्दी नीन्द आ गयी।

भगवान धीरे से भोजन पदार्थों के पास पहुँचा और तुरन्त अपनी भूख मिटाने लगा। वह पहले भूखा था और ऊपर से दोसे और चटनी दोनों बड़े स्वादिष्ट बने थे। अब वह सारे के सारे पदार्थ समाप्त करने तक अपने को रोक न सका। थोड़े और दोसे होते तो वे भी खा जाता वह! इस के बाद खीर का बर्तन भी उसने खाली किया। खीर तो अमृत के समान लगी उसे! ऐसी खीर अपनी ज़िन्दगीभर में नहीं खायी थी उसने!

भगवान की भूख पूर्ण रूप से मिट गयी। अब वह चुपके से यहाँ से निकल जाना चाहता था, तभी उसे प्रवेशद्वार के किवाड़पर दस्तक देने की आवाज़ सुनाई दी।

आहट पाकर घर की मालाकिन झट जाग गयी और 'अभी आयी' कहते हुए रसोईघर से बाहर निकल गयी। वह आगंतुक घर का मालिक

न्यायाधिकारी ही होगा और खाने के लिए सीधे रसोईघर में ही आयेगा और अब किसी ओर से भी खिसकने का मार्ग न देखकर वह झट ऊपर के तखते पर जा बैठा ।

उसकी कल्पना के अनुसार घर का मालिक अपनी पत्नी के साथ रसोईघर में पहुँचा और उसने पत्नी से पूछा "तुमने खाना तैयार रखा है न? मुझे भूख सता रही है । जल्दी दे दो ।"

"हाँ, हाँ! कभी का तैयार कर रखा है मैंने खाना । आपही के इन्तज़ार में बैठी हूँ ।" यह कहते हुए उसने पासवाले आले की तरफ़ देखा—उसे खाली पात्र मात्र दिखाई दिये! "ओह, मेरे बनाये सारे पदार्थ कहाँ गये?" आश्चर्य से वह बोल उठी ।

"क्या होगा? मेरे लौटने तक अपनी भूख दबा न सकने के कारण खुद ही खा गयी होगी ?" न्यायाधिकारी ने कहा । वह भूखा लौटा था और यहाँ खाली पात्र देखकर उस का क्रोध भड़क उठा ।

"क्या, आप को खिलाए बगैर कभी खाना खाया है मैं ने ? मैं ने खाना खाया है या नहीं यह भगवान खुद ही देख रहा है ।" पत्नी ने कहा ।

"तुम ने नहीं तो फिर किसने खाया? यहां कौन आयेगा खाना खाने?" पति का क्रोध और ही उबल रहा था ।

"मैं थोडा ऊँघ रही थी । शायद उस वक्त भगवान ने ही खाना खा लिया हो, क्या पता ?" पत्नी बोल उठी ।

"मार पड़नेपर ही तुम सच बात उगलोगी; ठहर जाओ । अभी तुम्हारी पिटाई किये देता हूँ ।" यह कहकर पति कोने में पड़ी लाठी उठा लाया ।

इस सारे दृश्य को देखकर डाकू भगवान को न्यायाधिकारी पर असहनीय क्रोध आया । वह तखते पर से उन पति-पत्नियों के बीच कूद पड़ा और न्यायाधिकारी से बोला, "आप की पत्नी ने सच्ची बात कही है । मैं ही भगवान हूँ । आप दोनों का खाना मैं ही खा गया हूँ । ऐसी हालत में अकारण ही इस बिचारी को क्यों पीटना चाहते हैं आप?" यह जवाब सुनकर न्यायाधिकारी चकित हो डाकू भगवान की तरफ देखता ही रह गया ।

इतने में बाहर से धीमी आवाज़ में पुकार

सुनाई दी—"भगवान ।"

"अभी आया" कहकर भगवान डाकू ठाठसे मकान से बाहर निकल गया ।

गोविन्दराज ने पहली मंजिल को पूरी तरह छान डाला, पर उसे चुराने लायक कोई चीज़ हाथ न लगी। वह थोड़ी देर अपने भानजे के इंतज़ार में खड़ा रहा। इस बीच उसे रसोई-घर के भीतर से ऊँची आवाज़ में कोई वार्तालाप सुनाई दिया। उसने समीप जाकर सुना। उस वार्तालाप के दौरान उसे 'भगवान' शब्द भी सुनाई दिया। उसके बाद उसे भगवान की आवाज़ भी सुनाई दी। इधर गोविन्दराज डर गया कि कहीं उसका भानजा घरवालों के हाथ में पड़ गया हो। इस विचार से उसने अपने भानजे का नाम लेकर पुकारा ।

भगवान ने जब अपने लौटने की बात कही, तब उसे सुनकर उसका आश्चर्य दुगुना हो गया। दोनों घर लौटते समय अपने भानजे से सारा वृत्तान्त सुनकर गोविन्दराज बोला, "अरे असली चोर और डाकू कोई हो; तो तुम्हीं हो। चोरी करके—घरके मालिक को चोरी की बात बताकर ठाठ से निकल आये हो।" गोविन्दराज ने भानजे की खूब तारीफ की ।

भगवान के चले जाने के बाद न्यायाधिकारी की पत्नी हठात् बोल उठी, "अरे! आप यह देखते खड़े हैं! वह तो चोर मालूम होता है। पकड़िये उसको ।"

इसपर न्यायाधिकारी जल्दी जल्दी डग भरते हुए घर से बाहर आया। लेकिन तब तक चोर चंपत हो गया था ।

बाद में न्यायाधिकारी की पत्नी ने पुनः कुछ खाना तैयार किया। पति-पत्नी को इसी उपाहार से संतुष्ट होना पड़ा ।

इधर घर पहुँचने पर गोविन्दराज ने अपनी पत्नी के पास भगवान की तारीफ़ के पुल बाँधे। मगर इस वक्त हाज़िरजवाबी के कारण ही भगवान बच पाया था। इसलिए बाद में जब भी कभी वे दोनो चोरी करने निकलते तब गोविन्दराज सावधानी बरतता, कि भगवान का पेट खाली नहीं है ।

बिजली के पेड़

इंग्लंड में सिंदूर वृक्ष (ओक), पाप्लार पेड़ अक्सर वज्रपात के शिकार बनते रहते हैं।

यह विश्वास सर्वत्र व्याप्त है कि, विपदा के समय शतुरमुर्ग अपना सिर रेत में घुसेड़ देता है। मगर यह बात सच नहीं है। कोई भी ध्वनि सुनाई देने पर शतुरमुर्ग अपना सिर झुकाकर एकाग्रता पूर्वक उसे सुनता है। मगर विपत्ति का समाचार मिलते ही वह भी अन्य प्राणियों की भाँति भाग खड़ा होता है।

कैम्पको की
नई
पेशकश
एक्लेयर्स जिनके भीतर है ज़्यादा चॉकलेट
ज़रा खोलिए नए कैम्पको चॉकलेट
एक्लेयर्स का पैक. देखते-ही देखते आपके चारों ओर
मुस्कराते चेहरे जमा हो जाएंगे... और आपके हाथों में
रह जाएगा, बस खाली पैक! मगर हाँ, आपकी खरी पसंद की
वाह-वाही आपको
ज़रूर मिलेगी.
कैम्पको
चॉकलेट एक्लेयर्स
मिल-जुलकर आनंद उठाइए
Chocolate Eclairs
Campco
भारत के सबसे बड़े,
सबसे आधुनिक प्लांट में निर्मित.
कैम्पको लिमिटेड, मैंगलोर
R K SWAMY/CU/5197/HIN

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां अक्तूबर १९८८ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

Bishan Maheshwari

Ravindra S. Kamboj

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ अगस्त १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियां केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

जून के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : **तुम्हारी मुस्कान**

द्वितीय फोटो : **कमरे की शान**

प्रेषक : रवीन्द्रशर्मा, ताजूगंज, ग्वाल मोहल्ला, नीमच-४५८४४१ (म. प्र.)

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३०-००

चन्दा भेजने का पता :

डॉल्टन एजेन्सीस, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिये :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

अपने शिशु को दीजिए सैरेलॅक का अनूठा लाभ

कीजिए ठोस आहार की आदर्श शुरूआत

४ महीने की उम्र से आपके शिशु को दूध के साथ-साथ ठोस आहार की भी ज़रूरत होती है. उसे सैरेलॅक का अनूठा लाभ दीजिए.

पौष्टिकता का लाभ : सैरेलॅक का प्रत्येक आहार आपके शिशु की आवश्यकता के अनुसार सारे पौष्टिक तत्व प्रदान करता है — प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, फ़ैट, विटामिन तथा मिनरल. सभी पूरी तरह संतुलित.

स्वाद का लाभ : शिशुओं को सैरेलॅक का स्वाद बहुत भाता है.

समय का लाभ : सैरेलॅक पहले से ही पकाया हुआ है और इसमें दूध और चीनी मौजूद है. केवल इसे उबाले हुए गुनगुने पानी में मिला दीजिए.

पसंद का लाभ : तीन तरह के सैरेलॅक में से आप अपनी पसंद का चुन सकती हैं.

कृपया डिब्बे पर दिए गए निर्देशों का सावधानी से पालन कीजिए ताकि इसके बनाने में स्वच्छता रहे और आपके शिशु को संतुलित पोषाहार मिले.

मुफ़्त! सैरेलॅक बेबी केयर बुक
लिखिये : सैरेलॅक, पोस्ट बॉक्स नं. 3
नई दिल्ली-110 008

सैरेलॅक का वादा : स्वाद भरा संपूर्ण पोषाहार

रेनू की सखियों से कट्टी
इसे पढ़ा देतीं वो पट्टी
अब इसने भी सोच लिया है
उनकी ये कर देगी छुट्टी
अपने एको पेन के सेट से
घंटों रंगती फूल औ' तितली
राजा, रानी, गुड्डा, गुड़िया
भूल के सब कुछ अगली पिछली
एको हरे और एको पीले
लाल और ऑरेंज, भूरे, नीले
काले, बैंगनी, वायलेट, गुलाबी
अब तो स्केच पेन एको ही लें.
मुफ़्त!
कलरिंग
फ़ोल्डर
EKCO
एको
स्केच पेन
रंगों से यारी, मौज-मस्ती तुम्हारी!
प्रीसिज़न राइटिंग पॉइन्ट्स प्रा. लि. १८, सुभाष रोड, विले पारले (पूर्व), बम्बई-४०० ०५७.

गाढ़े क्रीमदार
चॉकलेट एकलेयर्स
की शान

न्यूट्रीन

के स्वाभाविक रस

ज्यादा दूध, ज्यादा मक्खन,
ज्यादा चॉकलेट.

न्यूट्रीन - भारत में सबसे ज्यादा
बिकनेवाला चॉकलेट

Ask for

nutrine
Chocolate
Eclairs

nutrine